शान्ति-सन्देश

जुलाई, २०११ ई०

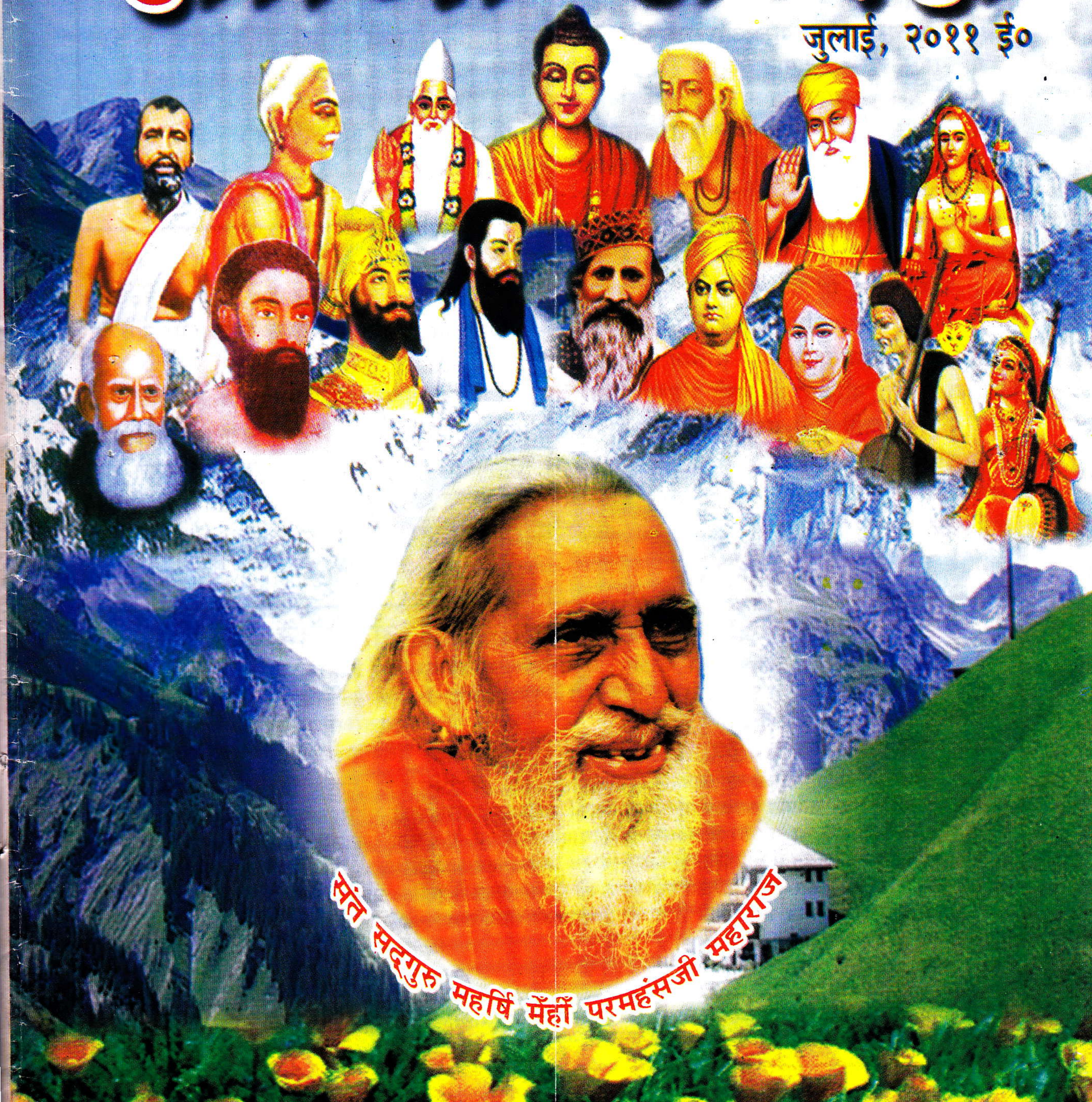

महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर, बिहार (भारत) पिन-८१२००३

विषय-सूची

क्रम	विषय	पृष्ठ
१.	सूक्ति-कण	१
२.	संतवाणी—संत सुन्दरदासजी महाराज की वाणी	२
३.	सत्संग-सुधा—परमाराध्य संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज	३
४.	हमेशह गुरु की याद करो—संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज	५
५.	प्रवचन-पीयूष : गुरु और गुरुभक्ति—पूज्यपाद महर्षि संतसेवी परमहंसजी महाराज	७
६.	गुरु-वचन—पूज्यपाद महर्षि हरिनन्दन परमहंसजी महाराज	११
७.	धर्मपथ के सहायक गुरु—श्रीरामकृष्ण परमहंसजी महाराज	१६
८.	सद्गुरु : मनुष्यरूप में साक्षात् नारायण (स्वामी विवेकानन्द का अनुभव)	१९
९.	सद्गुरु-लक्षण—समर्थ स्वामी रामदासजी महाराज	२०
१०.	सम्पादकीय : गुरु-पूर्णिमा	२३

महर्षि शाही स्वामीजी महाराज का महाप्रयाण

पूज्यपाद महर्षि शाही स्वामीजी महाराज का परिनिर्वाण दिनांक ३० मई, २०११ ई० के प्रात: ७.३० बजे महर्षि मेँहीँ धाम, मनियारपुर (बौंसी) में हो गया—यह सूचना पाकर मेरे मन में बहुत बड़ा आघात पहुँचा। संतमत की एक महान् विभूति ने शरीर छोड़ दिया, इससे हम संतमत-सत्संग परिवार के सभी सदस्य शोकाकुल हो रहे हैं। वे संतमत के बहुत बड़े स्तम्भ थे। संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज उनको बहुत प्यार करते थे। उनकी सरलता, उदारता, विनयशीलता और खुशमिजाजी के कारण प्रेम से गुरु महाराज उन्हें अपना हृदयस्वरूप मानते थे। स्वामीजी संतमत के गूढ़ ज्ञान को बड़े ही सरल और सहज ढंग से जन सामान्य के बीच रखते थे। इनके महापरिनिर्वाण से संतमत की अपूरणीय क्षति हुई है।

हरिनन्दन

पक्ष ध्यान-साधना-शिविर का आयोजन

स्थान : महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर-३ (बिहार)

दिनांक : १७ अगस्त, २०११ से ३१ अगस्त, २०११ ई० तक

साधक संख्या : असीमित (केवल पुरुष) **व्यवस्था शुल्क :** ५०१ रुपये

माघ भूखा बाघ काल के, मुख पड़ो है बाबरे। होश कर चेतो सबेरे, बचो ध्यान के दाव रे ॥

आप सभी धर्मप्रेमियों को यह जानकर अपार हर्ष होगा कि गंगातट स्थित सिद्धपीठ महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर में संतमत के वर्तमान आचार्य पूज्यपाद महर्षि हरिनन्दन परमहंसजी महाराज के सान्निध्य में पक्ष-ध्यान-साधना का आयोजन होने जा रहा है। जो साधक प्रतिदिन पाँच बार एक-एक घंटा ध्यानाभ्यास के लिए बैठने में अभ्यस्त हों, कृपया वे ही इस आयोजन में सम्मिलित होने के लिए **१० अगस्त** तक आवेदन-पत्र के साथ, व्यवस्था शुल्क निम्न पते पर भेज सकते हैं। कुछ कारणवश माताओं एवं बहनों को इस कार्यक्रम में शामिल करने में हम सक्षम नहीं हैं। साधकगण अपने दैनिक व्यवहार के सभी सामानों के साथ **१६ अगस्त** की संध्या तक पहुँच जाएँ।

पत्राचार एवं ड्राफ्ट/मनीऑर्डर भेजने का पता :
व्यवस्थापक, महर्षि मेँहीँ आश्रम कुप्पाघाट, भागलपुर-३ (बिहार)

निवेदक : स्वामी निर्मलानन्द, व्यवस्थापक
महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर-३

नोट : जो सज्जन ध्यानाभ्यास के अवसर पर भंडारा देना चाहते हैं, वे एक शाम के कच्ची भंडारे का शुल्क—५१००, खीर-पूड़ी का ६५०० एवं पूड़ी-बुन्दिया का ७५०० रु० जमा कर पुण्य के भागी बनें।

शान्ति-सन्देश

अखिल भारतीय संतमत-सत्संग का प्रमुख मासिक पत्र

वर्ष ६१ अंक ४

आषाढ़-श्रावण, २०६८ वि० सं०

जुलाई, २०११ ई०

संस्थापक

महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज

सम्पादक एवं प्रकाशक

प्रो० डॉ० गुरु प्रसाद (मंत्री)

प्रेस प्रबंधक

स्वामी स्वरूपानन्द

सहयोग राशि : एक प्रति ६ रुपये

वार्षिक ६० रुपये

पंद्रहवर्षीय ७०० रुपये

विदेश के लिए : वार्षिक १० डॉलर

पंद्रहवर्षीय १०० डॉलर

सहयोग राशि भेजने का पता

प्रबंधक, शान्ति-सन्देश

महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट,

भागलपुर, बिहार (भारत)

पिन–८१२००३

☎ –०६४१-२४२७४९८

ड्राफ्ट इस नाम से बनवाएँ–

Shanti Sandesh Patrika

(शान्ति-सन्देश पत्रिका)

सूक्ति-कण

✪ **गुरुभावः परं तीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् ।**
सर्वतीर्थमयं देवि श्रीगुरोश्चरणाम्बुजम् ॥

गुरुभक्ति ही सबसे श्रेष्ठ तीर्थ है। अन्य तीर्थ निरर्थक हैं। हे देवी! गुरुदेव के चरणकमल सर्वतीर्थमय हैं।

✪ **गुरुसेवा गया प्रोक्ता देहः स्यादक्षयो वटः ।**
तत्पादं विष्णुपादं स्यात् तत्र दत्तमनस्ततम् ॥

गुरुदेव की सेवा ही तीर्थराज गया है। गुरुदेव का शरीर अक्षय वटवृक्ष है। गुरुदेव के श्रीचरण भगवान विष्णु के श्रीचरण हैं। वहाँ लगाया हुआ मन तदाकार हो जाता है।

✪ **गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।**
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ॥

–स्कन्ध पुराण (शिव-पार्वती संवाद)

ब्रह्मा, विष्णु और शिव-सहित समग्र जगत् गुरुदेव में समाविष्ट है। गुरुदेव से अधिक और कुछ भी नहीं है, इसलिए गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए।

✪ **किं दानेन किं तपसा किमन्यत्तीर्थसेवया ।**
श्री गुरोरर्चितो येन पादौ ते नार्चितो जगत् ॥

–तंत्र शास्त्र

दान और तप करने से कोई लाभ नहीं है; परन्तु जिस पुरुष ने गुरु के चरणों की पूजा की, उसने सम्पूर्ण-जगत् की पूजा की।

✪ **न स्नानेन न होमेन नैवाग्नि परिचर्यया ।**
ब्रह्मचारी दिवं याति संयाति गुरु पूजनात् ॥

–शंख

स्नान, हवन और अग्नि-सेवन से ब्रह्मचारी स्वर्गलोक में नहीं आता; किन्तु गुरु-पूजन से स्वर्गलोक में जाता है।

✪ **गुरुमभ्यर्च्य वर्द्धन्ते धर्मसायशसा श्रिया।**

–महाभारत

गुरु-पूजन करने से शिष्य की आयु और लक्ष्मी की वृद्धि होती है।

संतवाणी

संत सुन्दरदासजी महाराज की वाणी

॥ मनहर छन्द ॥

गुरु के प्रसाद बुद्धि उत्तम दशा को गहै।
गुरु के प्रसाद भव दुःख विसराइये ॥
गुरु के प्रसाद प्रेम प्रीतिहु अधिक बाढ़ै।
गुरु के प्रसाद राम नाम गुण गाइये ॥
गुरु के प्रसाद सब योग की युगति जानै।
गुरु के प्रसाद शून्य में समाधि लाइये ॥
सुन्दर कहत गुरुदेव जू कृपालु होइ।
तिन के प्रसाद तत्त्वज्ञान पुनि पाइये ॥

❖ ❖ ❖

गोविन्द के किये जीव, जात है रसातल को।
गुरु उपदेशै सो तो, छूटै यम फन्द तें॥
गोविन्द के किये जीव, वश परे कर्मन के।
गुरु के निवारे सूँ, फिरत है स्वछंद तें॥
गाविन्द के किये जीव, डूबत भवसागर में।
सुन्दर कहत गुरु, काढ़ै दुख द्वन्द्व तें॥
औरहू कहाँ लौं कछु, मुख तें कहूँ बनाय।
गुरु की तो महिमा, अधिक है गोविन्द तें॥

□□□

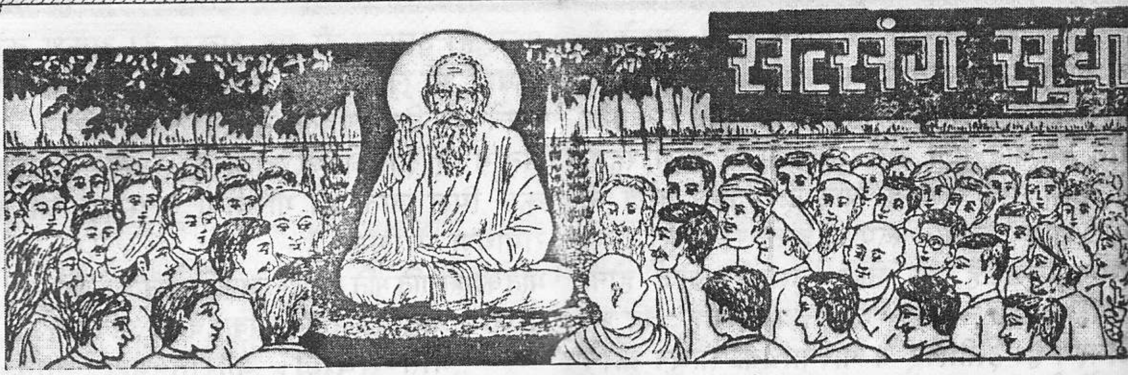

परमाराध्य सन्त सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज

प्रातःस्मरणीय अनन्त श्रीविभूषित पूज्यपाद संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज का यह प्रवचन बिहार राज्यन्तर्गत पुरैनियाँ जिला के मौजमपट्टी ग्राम में श्रीसदानंदजी सागर के सुपुत्र मनु भास्करजी की जयंती के अवसर पर दिनांक २४.०७.७८ ई० को हुआ था।–श्रुतलेखक : पूज्यपाद महर्षि संतसेवी परमहंस

बन्दउँ गुरु पद-कंज, कृपासिन्धु नररूप हरि।
महामोह तमपुंज, जासु बचन रबिकर निकर।।

प्यारे लोगो!

भगवान श्रीकृष्ण के भी अनेक जन्म हुए; परन्तु उनके जितने भी जन्म हुए, उन सब जन्मों में उन्होंने संसार के दुःखों का नाश करने के वास्ते और दुष्ट-जनों को दण्ड देने के वास्ते ही अवतार ग्रहण किया था। हम सब लोगों के भी अनेक जन्म हुए हैं। भिन्न-भिन्न संस्कार के हम सब लोग एक ही जगह रहते हैं। इससे सिद्ध होता है कि हमलोग पूर्व-जन्म के अनेक संस्कार लेकर आए हैं।

जितने भी अवतार वा ऋषि, मुनि वा संत लोग हुए हैं, वे सब भी यह कहते हैं कि जन्म-मरण से छूटने का उपदेश जानो। जो उपदेश जन्म-मरण से बचाने के वास्ते पाए जाते हैं; उन उपदेशों का जो सार है, वह ठीक से समझो, तो यही मालूम पड़ेगा कि सुकर्म करते हुए, ईश्वर-भजन करते हुए, कर्त्तव्य-कर्म का पालन करते हुए, संसार को छोड़कर जाओ। जैसे संसार के सभी देशों में कोई-न-कोई सरकार अवश्य होती है। उन सभी सरकारों में ऐसी शक्ति होती है, जो संसार में शासन का काम करती है और जो जनसमूह है, उसको शासन में रखती है और उनसे संसार का काम भी लेती है। उनको ईश्वर-भजन–पारमार्थिक-साधन करने से नहीं रोकती है। जो सरकार देश की रक्षा करती है और देश के मनुष्यों को शासन में रखकर उनकी भलाई करती है, तो उस सरकार की अथवा संसार के किसी देश के शासन की अवहेलना नहीं करनी चाहिए।

हमलोगों का देश बहुत पुराने जमाने से राजाओं के शासन में था। आजतक उसमें पहले जितने राजा लोग हुए, उन राजाओं में विदेशी राजाओं ने भी शासन किया; लेकिन हमारे पूर्वजों ने उनके शासन को मानते हुए भजन-ध्यान और सत्संग को नहीं छोड़ा। हमलोगों को भी भजन-ध्यान और सत्संग करते रहना चाहिए।

आज भी जो हमारी सरकार है, वह हमलोगों को साधन-भजन और सत्संग करने से नहीं रोकती है। आसानी से सत्संग-भजन-साधन हमलोग करते हैं।

इस संसार में जो ऐहिक-सुख चाहते हैं; वे बहुत हैरान होते हैं। संसार के सुख के साथ दुःख मिला हुआ है। जैसे दिन के बाद रात और रात के बाद दिन अनवरत-रूप से होता रहता है, उसी तरह सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख अनिवार्य रूप से होता रहता है। इससे भिन्न-सुख है कि नहीं, उसकी खोज होनी चाहिए। संतों ने कहा-जो नित्य-सुख है, वह भी अवश्य है। इसीलिए वे पारमार्थिक साधन करने कहते हैं। सांसारिक काम करने के लिए संतलोग मना नहीं करते हैं, सत्संग-भजन-साधन करने के लिए कहते हैं और कहते चले आए हैं। साधन-भजन में मुख्यता ईश्वर-भक्ति की है।

ईश्वर का ज्ञान पहले होना चाहिए और अपना भी ज्ञान होना चाहिए। हमलोग जो पहले स्तुति-पाठ करते हैं, उसमें ईश्वर-स्वरूप का वर्णन है। संतों के बताये अनुकूल चलकर वह सुख पा सकते हैं, जो ईश्वर में है। दिन और रात-ये दोनों काल के अन्दर हैं। काल से जो परे है, वह परमात्मा का स्वरूप है। इसीलिए गुरु नानकदेवजी ने कहा है-

अकाल मूरति अजोनि संभउ।

परमात्मा इसी तरह है, वह वचन में नहीं बताया जा सकता है।

निरुपम न उपमा आन राम समान राम निगम कहै।

ऐसा गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है और कबीर साहब ने कहा है-

जस कथिये तस होत नहीं, जस है तैसा सोइ।
कहत सुनत सुख ऊपजै, अरु परमारथ होइ ।।

परमात्मा के इसी स्वरूप को जानकर पाना है। अवश्य ही यह अकथ है। अकथ को कथनी में लाना नहीं हो सकता है। उपासना करने के लिए पहले सत्संग करना पड़ता है। सत्संग से ज्ञान प्राप्त होता है। सत्संग से सब कुछ मिल जाता है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामायण में लिखा है-

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।
सो जानव सत्संग प्रभाऊ। लोकहुँ वेद न आन उपाऊ।।

मति=सुबुद्धि, कीरति=यश, गति=शुभगति=मोक्ष, भूति=ऐश्वर्य, भलाई=शीलता-ये सब सत्संग से मिलते हैं। जहाँ सुबुद्धि हो, यश हो, मोक्ष हो, ऐश्वर्य हो, शीलता हो; वहाँ पाने को और बाकी नहीं रह जाता। हमलोगों में बहुतों के जन्म ऐसे समय में हुए, जब यहाँ अंग्रेजों का राज्य था। ईश्वर को जबतक मंजूर था, तबतक उनका राज्य रहा। महात्मा गाँधीजी हुए, उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ आन्दोलन किया और कांग्रेस महासभा का राज्य हुआ। इसमें भी वह शासन आया, जो जनतंत्र-शासन कहलाता है। मुझे इस शासन में कोई कठिनाई नहीं होती है।

सत्संग में उपदेश दिया जाता है- 'झूठ मत बोलो, चोरी मत करो, नशा मत खाओ-पीओ, हिंसा नहीं करो, व्यभिचार मत करो।' इसके खिलाफ में जो उपदेश होगा, इससे शासन को ठेस लगेगी और परमार्थ भी मिट जाएगा। हमलोग सत्संग करें और जीविकोपार्जन करें, खेती आदि जो कुछ काम करना हो करें। जिनको अपने उपार्जन के लिए जैसी योग्यता हो, वैसा काम करें और सत्संग करें। ❖

गुरुमंत्र

गुरुमंत्र साक्षात् भगवान है। उसके जप से बहिर्मुखी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी हो जाती हैं। मन तथा इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं। मन का विक्षेप मिट जाता है। इस प्रकार एकाग्रचित्त से किया गया मंत्र-जप साधक को ध्यानावस्था में पहुँचा देता है। अंततः जप-सहित ध्यान पापरहित ध्यान में परिणत हो जाता है और समाधि की अवस्था में उसे आत्मसाक्षात्कार हो जाता है। यह गुरुमंत्र का आन्तरिक गूढ़ अर्थ है।

-स्वामी श्रीचिदानंदजी महाराज

हमेशह गुरु की याद करो

–संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज

प्यारे लोगो!

इस शरीर की हालत आपलोग देखते हैं। शरीर की हालतों में जो अच्छा या बुरा कुछ उपजते रहते हैं, वह सब आपलोग जानते और भोगते हैं। सबके लिए यही बात है। मेरा यह शरीर है, मेरा मन है, मेरी बुद्धि है इत्यादि लोग बोलते हैं। यह मेरा कहनेवाला कौन है? इसको पहचानना चाहिए। बाहर संसार में तमाम घूमो और पूछते रहो कि मेरे को बता दो, मेरे को बता दो। कोई कहेंगे कि यह पागल है। कोई कहेंगे कि शान की बात कर रहा है। जो अच्छे लोग हैं, विशेषज्ञ हैं, वे कहेंगे–'तू अपने में खोज, तो अपने को पाएगा।'

अपने में अर्थात् अपने शरीर में खोजोगे, तो अपने को पा जाओगे। इस खोज में कोई अपने जानते लाख कोशिश करे, कोशिश में लगावे, तो भी इसका पता नहीं पा सकता है। यह पता कोई तभी पाता है, जिसको पता बतानेवाले मिले हैं। उनसे जाकर पूछिये। जिनको पता मिल गया है, वे ही अन्तर-साधना करनेवाले पूर्ण साधु-संत हैं। साधु-सन्त को इसका पता मिलता है। इसलिए कि वे अपने अन्दर खोजते हैं। अपने शरीर के अन्दर खोज कर लीजिए। अपने को समझे कि अपने शरीर में मैं कहाँ रहता हूँ। शरीर के ऊपर तो कहीं बैठा नहीं है और अपने को विश्वास भी नहीं है कि मैं शरीर हूँ। खोज करे, जहाँ वह बैठा है। बाहर में कहीं बैठा नहीं है। अन्दर खोज करे, बाहर का देखना छोड़कर। अन्दर में आँख बंद करके पूछो कि मैं कहाँ हूँ? उत्तर आवेगा, अन्धकार में हूँ। अन्धकार कहाँ है? आँख में है। यहाँ से खोजना आरम्भ करो।

जबतक अभ्यासी गुरु नहीं मिलेंगे, कैसे खोज करोगे, पता नहीं मिलेगा। बात-बात में गुरु की आवश्यकता होती है। बिना गुरु के एक अक्षर नहीं सीख सकते, माता-पिता भी नहीं सिखला सकते। ऐसे गुरु जो बता दें कि अन्धकार में कहाँ हो, वहाँ से कैसे चलना होगा? ऐसे गुरु कहाँ से मिलते हैं? सत्संग में मिलते हैं। सत्संग में यह ज्ञान उपजता है कि गुरु की खोज करो। इसलिए ईश्वर की पहली भक्ति संतों का संग है। दूसरी बात है कि सत्संग में जो वचन हो, उसे खूब प्रेम से सुनो। तीसरी बात है कि उस सत्संग-वचन में जो गूढ़ बात हो, उसको जानो। इसलिए गुरु की ऐसी भक्ति करो कि जिसका अंदाजा नहीं। सदा गुरु के साथ में कोई रहे, यह भी संभव नहीं। इसलिए कबीर साहब ने कहा है–

जौं गुरु बसे बनारसी, शिष्य समुन्दर तीर।
एक पलक बिछुड़ै नहीं, जौं गुन होय शरीर।।

हमेशह गुरु की याद करो। द्वापर-युग में द्रोणाचार्य एक गुरु हुए थे। कौरव-पाण्डव को वे धनुर्विद्या सिखलाते थे। एक भील-पुत्र भी गया उनसे सीखने के लिए, तो आचार्य द्रोण ने कहा–'मैं राजकुमारों को सिखलाता हूँ, दूसरों को नहीं।' वह भील-पुत्र था एकलव्य। उसने द्रोण की मूर्त्ति बनाई और उसका ध्यान करते हुए धुनर्विद्या का अभ्यास करने लगा। होते-होते वह उस विद्या में इतना प्रवीण हुआ, जितना अर्जुन भी नहीं था। एक दिन ये लोग जंगल में घूमते थे। एक कुत्ता भी उनके साथ में था। वह कुत्ता एकलव्य को देखकर भूँका, तो एकलव्य ने उस कुत्ते के मुँह में इतने तीर मारे कि उसका मुँह तीरों से भर गया; लेकिन एक बूँद भी खून नहीं गिरा। कुत्ता जब इनलोगों के पास वापस आया, तो इनलोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उस कुत्ते के पीछे-पीछे ये लोग चले। वह कुत्ता एकलव्य की कुटिया के पास खड़ा हो गया।

द्रोणाचार्य ने पूछा–'यह विद्या तुमने किससे सीखी?' एकलव्य ने कहा–'आपसे। आपकी मूर्त्ति बनाकर और उसका ध्यान करके मैंने इस विद्या को हासिल किया।' कहने का तात्पर्य यह है कि जिसको गुरु में ज्यादा निष्ठा होती है, वह किसी-न-किसी तरह विद्या पाता है। गुरु के ख्याल से, गुरु के संग से लोग विद्या पाते हैं।

राजा उत्तानपाद का पुत्र ध्रुव था। उसकी सौतेली माँ ने उसे पिता की गोद से उतार दिया। ध्रुव तपस्या करने जंगल चला गया। पाँचों भाई पाण्डव एक माता के नहीं थे। युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन की माता कुन्ती थी। नकुल-सहदेव की माँ माद्री थी। सब सौतेली माताएँ एक-सी नहीं होती। कुन्ती ने नकुल और सहदेव का बहुत प्यार से पालन-पोषण किया। किसी माता को यदि सौत-पुत्र हो, तो उसका प्यार से पालन करें और सच्चरित्रता धारण करें। कुन्ती बड़ी सती थी और बड़ी विरक्ति उनमें थी। महाभारत-युद्ध के बाद जब पाँचों भाई पाण्डव का राज्य हुआ, तो धृतराष्ट्र और गांधारी दोनों जंगल चले। उनके संग कुन्ती भी जंगल चलने लगी, तो उनके पुत्रों ने इन्हें मना किया। कुन्ती ने कहा कि मैं अपने पति के समय में बहुत सुख पाया। मैं भी अब जंगल जाऊँगी। उनलोगों के साथ कुन्ती भी चली गयी। लोगों को चाहिए कि सौत-पुत्र को सुदृष्टि से देखे और पतिव्रता भी रहे। पतिव्रता हुए बिना पवित्र-हृदय नहीं होता। पुरुष को भी चाहिए कि श्रीराम की तरह एक पत्नीव्रत धारण करे और ईश्वर-भजन करें इसमें कौन मना करेगा? जिसका हृदय प्रशान्त-महासागर की तरह स्थिर हो गया है (प्रशान्त-महासागर में ढेव नहीं उठता और अन्य समुद्र में ढेव उठता है।), वही शान्ति पाता है और हृदय शान्ति नहीं पाता। जो शान्ति पाता है, तो वह परमात्मा को पाता है।

जैसे आकाश का अंश घटाकाश, मठाकाश होता है; लेकिन अभिन्न अंश है। इसी तरह बिना टूटा-फूटा हुआ अंश जीवात्मा, परमात्मा का अंश है। अंश तो आवरण बनाता है। आवरण टूट जाए, तो अंश नहीं रहेगा। अंश अंशी में मिल जाता है। वह प्रशान्त-महासागर की तरह स्थिर हो जाता है। जैसे ईश्वर है, उस ईश्वर से मिलकर वह भी ईश्वर हो जाता है। इन्हीं सब बातों को संतमत बतलाता है। ❖

❖ **संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज** का यह प्रवचन संथाल परगना के फतेहपुर ग्राम में दिनांक १६.११.१९७९ ई० को प्रातःकालीन सत्संग के अवसर पर हुआ था। –सम्पादक

मनुष्य दुःखी क्यों है?

चीन के महान दार्शनिक कन्यूशियस (कांगफ्यूत्सी) उन दिनों गाँव-गाँव, जंगल-जंगल विचरण करते थे। जहाँ कहीं पड़ाव डालते, लोग उनका उपदेश सुनने के लिए इकट्ठे हो जाते। एक दफा कुछ लोग यह जानकर कि कांगफ्यूत्सी उनके गाँव के पास ही रुके हुए हैं, उनसे मिलने आए। उन्होंने पूछा कि–'महाशय! कृपया यह बताएँ कि मनुष्य दुःखी क्यों है?

कांगफ्यूत्सी बोले–"भाइयो! मनुष्य इसलिए दुःखी होता है कि वह गुणों को अपनाता नहीं। गुणों को ग्रहण नहीं करता। मनुष्य को दुःख इसलिए होता है; क्योंकि वह अपने दोषों को दूर नहीं करता। अपनी बुराइयों को जानते हुए भी उन्हीं से चिपटा रहता है। मनुष्य को दुःख इसलिए होता है कि वह अपने ज्ञान की कसौटी पर नहीं कसता। उसे जो जानकारी रहती है, उसकी परीक्षा नहीं करता। मनुष्य को दुःख इसलिए होता है कि सही रास्ता बता दिए जाने पर भी वह उसपर चलता नहीं। सत्य-पथ को जान लेने पर भी उसपर आगे बढ़ता नहीं।" ❁

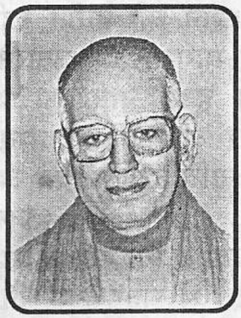

पूज्यपाद महर्षि संतसेवी परमहंसजी महाराज

प्रवचन-पीयूष

गुरु और गुरुभक्ति

गुरुभक्तियोग का अभ्यास अमरता, परम शांति तथा नित्य आनंद प्रदान करता है।

गुरुभक्तियोग गुरु-कृपा द्वारा प्राप्त कठोर अनुशासन का पथ है। गुरुभक्तियोग अन्य सब योगों—यथा कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग, हठयोग आदि का आधार है।

गुरुभक्तियोग का मार्ग मात्र योग्य शिष्य को आशु फलप्रद होता है।

गुरु भक्तियोग की चरम परिणति अहंभाव के नाश तथा अमर आनंद की उपलब्धि में होती है।

गुरु के प्रति सच्चा तथा हार्दिक आत्मसमर्पण गुरुभक्तियोग का सार है। गुरुभक्तियोग दर्शन के अनुसार गुरु तथा भगवान एक ही हैं। अतएव गुरु के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण परमावश्यक है।

गुरुभक्तियोग का आश्रय लेकर अपनी खोयी हुई दिव्यता को पुनः प्राप्त करें।

साधकों के जीवन में हम पाते हैं कि उनमें से कई लोगों को ईश्वरीय रूप के दर्शन हुए थे। वह ईश्वर अपने को किसी-न-किसी रूप में प्रकट कर देता है। वह गुरु बन जाता है।

शिष्य का कर्त्तव्य है कि जिस गुरु से धर्म-प्रवचन सीखे, उनकी निरंतर भक्ति करे। मस्तक पर अंजली चढ़ाकर गुरु के प्रति सम्मान प्रदर्शित करे। जिस तरह भी हो सके, मन से, वचन से और शरीर से गुरु की सेवा करे।

सच्चे संत मानव-जाति की निःस्वार्थ सेवा के कारण या वासनाओं और विचारों पर प्रभुत्व के कारण या ईश्वर के प्रति एकाग्र प्रेम के कारण या महान ध्यान शक्ति के कारण एक प्रकार से योग ही हैं। ये लोग अपने सामने योग एवं आत्मसंयम का ही आदर्श रखे हुए हैं।

जो गुरु की आज्ञा का पालन करता है, उनके पास रहता है, उनके इंगितों पर आकारों को जानता है, वही विनीत कहलाता है।

(महावीर)

कुछ लोग कहते हैं कि गुरु महाराज स्त्री, धन, पुत्रादि छुड़ाते हैं। यह नितांत भूल है। यह काम तो यमराज का है। गुरुदेव केवल दुःखदायक आसक्ति का त्याग कराते हैं तथा ममता का दान कराते हैं।

जब श्रीरामकृष्ण को उनके गुरु ने अद्वैत वेदांत की साधना में दीक्षित किया, तो वे अत्यन्त सरलता के साथ उच्च स्थिति में पहुँच गए। वहाँ से एक सीढ़ी और सिद्धि उनके सामने थी; किन्तु उनके सम्मुख एक अलंघ्य जगन्माता काली के रूप में आ खड़ी हुई। लेकिन, यह बाधा भी गुरु के निर्देशानुसार चलने से दूर हो गई और वे निर्विकल्प समाधि में स्थित हो गए।

गुरु के पुण्य चरणों के स्पर्श करते समय शिष्य सदा ही रोमांचित हो जाता है। गुरु के पुनीत स्पर्श से शिष्य एक आध्यात्मिक शक्ति

से ओतप्रोत हो उठता है और उसमें एक सूक्ष्म प्रवाह उत्पन्न हो जाता है। भक्त के मस्तिष्क में विद्यमान अवांछनीय संस्कार आग में तपकर पवित्र हो जाते हैं और सांसारिक प्रवृत्तियाँ मंगलोन्मुखी हो उठती हैं।

गुरु को मनुष्य बुद्धि कहने से और इष्ट मंत्र को अक्षरमात्र समझने से मनुष्य नरकगामी होता है अर्थात् ऐसी भ्रमात्मक और विपरीत बुद्धि के कारण और गुरु में श्रद्धा-विश्वास हीनता के दोष से आध्यात्मिक उन्नति तो होती ही नहीं, उलटे मनुष्य की अधोगति होती है।

गुरु के प्रति यदि विन्दुमात्र भी प्रेम हो, श्रद्धा-भक्ति हो, तो फिर उनके कंधों पर अपना सब कूड़ा-कर्कट और मैल लादकर परिणामतः उन्हें दुःख-यंत्रणा भोग कराने के लिए क्या दिल चाहेगा? नहीं। बल्कि, जिनकी गुरु के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा और प्रेम है, वे तो इस भय से कि शायद बाद में गुरु को भोगना पड़े, कोई पाप कर्म ही नहीं कर सकते। हाँ, ऐसे शिष्य का वे पाप-भार लेते हैं। वस्तुतः भगवान ही गुरु-रूप से उसका भार ग्रहण करते हैं और उद्धार करते हैं। (परमार्थ प्रसंग)

जो निर्गुण ब्रह्म है, वही सगुण ब्रह्म है। सगुण ब्रह्म और अवतार में कोई पार्थक्य नहीं है। पर अवतार और जीव में प्रभेद है। मनुष्य अपने कर्मवश बाध्य होकर बार-बार जन्म ग्रहण करता है; किन्तु अवतारी संत सद्गुरु स्वेच्छा से जगत् की रक्षा, अधर्म का नाश और धर्मस्थापन के लिए तथा भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए युग-युग में अवतीर्ण होते हैं। और भी, जीव त्रिगुणात्मक प्रकृति के वशीभूत होकर जन्म ग्रहण करते हैं; किन्तु अवतार प्रकृति के या त्रिगुणों के अधीन नहीं, उनके मालिक और नियन्ता हैं। अवतारी संत सद्गुरु साक्षात् भगवान ही हैं, केवल उनके ही देहरूपी खोल ही मनुष्य के आकार की होती है। जैसे ज्ञान-विज्ञान के बिना मोक्ष नहीं हो सकता, उसी प्रकार सद्गुरु से सम्बन्ध हुए बिना ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती। गुरु इस संसार-सागर से पार उतारनेवाले हैं और उनका दिया हुआ ज्ञान को पाकर भवसागर से पार और कृतकृत्य हो जाता है। फिर उसे नौका और नाविक दोनों की अपेक्षा नहीं रहती। (जनक)

प्रायः देखा जाता है कि निर्विकारपूर्वक बहुतों को मंत्रदीक्षा देने से सद्गुरु के निष्पाप शरीर को भी कठिन रोग आक्रांत कर उनकी आयु क्षय करते हैं। स्वार्थशून्य परम कारुणिक सद्गुरु जान-बूझकर परहित के लिए उन्हें भगवान की ओर ले जाने की प्रेरणावश खुद के शरीर की कोई भी चिंता नहीं करते। अवतारी संत अन्यों के पापों को ग्रहण करते हैं, उन्हें भी इसीलिए रोगों को भोगना पड़ता है। श्रीरामकृष्ण कहते थे–गिरीश के पापों को लेने पर ही मेरे शरीर में यह व्याधि (कैंसर) हुई।

शिष्य यदि शुद्धसत्त्व और यथार्थ भगवत्-प्रेमी हो, तो वह गुरु के आध्यात्मिक शक्ति-संचार को भीतर-ही-भीतर अपने प्राणों में अनुभव कर सकता है। गुरु-कृपा और शिष्य के अथक परिश्रम से ही साधना में लाभ होता है।

जिज्ञासु को चाहिए कि गुरु को ही अपना परम प्रियतम आत्मा और इष्ट माने। उनकी निष्कपट भाव से सेवा करे और उसके पास रहकर भागवत धर्म की, भगवान को प्राप्त करानेवाले भक्तिभाव के साधनों की क्रियात्मक शिक्षा ग्रहण करे। (स्वामी रामतीर्थ)

पूरे संत जो कहते और करते हैं, उसकी मसलहत (रहस्य) जीव तत्काल नहीं लख सकता। समय आने पर उनकी मौज से सूझ पड़ती है; क्योंकि जो मालिक के चरणों में लवलीन है, वह ऐसा ही गुप्त हो जाता है जैसा कि उसका प्रीतम। (सुन्दरदासजी)

संत महापुरुषों के दण्ड में भी कृपा भावना विद्यमान रहती है। दण्ड के द्वारा ही वे

व्यक्ति के अन्तःकरण का शोधन करते हैं और पात्रता का उदय होते ही उसे कृपामृत से पूर्ण कर देते हैं। गुरु वस्तुतः जीवात्मा और परमात्मा के मध्य की कड़ी है। जीवन्मुक्त संत वास्तविक गुरु है।

अपने गुरु की पूजा ईश्वर भाव से करनी चाहिए। यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि ईश्वर और ब्रह्म की सभी शक्तियाँ गुरु में ही विद्यमान है। गुरु को ईश्वर का ही अवतार समझना चाहिए। गुरु, ईश्वर, ब्रह्म, सत्य तथा ॐ एक ही है।

गुरु की सेवा भक्तिसहित करो। गुरु में तुम्हें केवल देवत्व का ही अनुभव करना चाहिए। जब तुम ऐसा करोगे, तभी ब्रह्म की प्राप्ति संभव होगी। धीरे-धीरे गुरु का शारीरिक रूप तिरोभूत हो जाएगा और तुम उनके व्यापक होने का अनुभव करोगे, तब तुम्हें स्थावर-जंगम, जड़-चेतन में भी गुरु के दर्शन प्राप्त होंगे। इसके अतिरिक्त संस्कारों से छूटकारा पाने का कोई दूसरा उपाय नहीं है। केवल गुरु की सेवा के द्वारा ही तुम बंधनों को तोड़ सकते हो। जो साधक पूर्ण भक्ति के साथ गुरु की पूजा करता है, वह शीघ्र ही अपने को निर्मल तथा पवित्र बना लेता है। यही आत्मशुद्धि का सबसे सरल तथा अचूक उपाय है।

संतों का पथ भगवान में विश्वास पर आधारित होता है, जीवन की पवित्रता पर आधारित होता है। किसी भी देश अथवा जाति के किसी भी संत का जीवन देखें, तो पाएँगे कि उन्होंने अपने वैयक्तिक उदाहरण तथा आदर्श में जो पथ हमें दर्शाया है, वह एक ही है।

हमें सदा गुरु का स्मरण करना चाहिए। गुरु के क्षण मात्र के अनुचिंतन से ही हमारा हृदय तत्काल निष्कलुषमय हो जाता है। हमारी प्रकृति पवित्र हो जाती है। हम दैवी प्रेरणा से आपूरित हो जाते हैं और उन्नत स्थिति में पहुँच जाते हैं; क्योंकि उनके जीवन में अलौकिक शक्ति होती है। उन्होंने अपने को पूर्ण रूप से रिक्त कर दिया था, दिव्य आत्मा ने उन्हें आपूरित कर दिया।

गुरु तो सदा ही सदय होते हैं; किन्तु गुरु-कृपा तो केवल भेंट करने की, प्रदान करने की ही वस्तु नहीं है, वरंच वह ग्रहण करने की भी वस्तु है। उसे प्राप्त कर हम अपने को अमर तथा दिव्य बना लेते हैं।

सन्तों से ज्ञान की प्राप्ति करो। सन्त तुम्हारा उद्धार करेंगे, तुम्हारा मार्ग दिग्दर्शन करेंगे और तुम्हारे लक्ष्य तक साथ-साथ रहेंगे। यह आवश्यक नहीं कि गुरु शरीर में रहने पर ही शिष्य पर कृपा कर सकता है, वरन् शरीर में न रहने पर भी शिष्य की सदा रक्षा करता है; क्योंकि गुरु-शिष्य का संबंध मात्र शारीरिक ही नहीं है, वरन् दो आत्माओं का संबंध है और आत्मा अमर है।

गुरु मंत्र साक्षात् भगवान है। उसके जप से बहिर्मुखी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी हो जाती हैं। मन तथा इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं। मन का विक्षेप मिट जाता है। इस प्रकार एकाग्रचित से किया गया मंत्रजाप साधक को ध्यानावस्था में पहुँचा देता है। अंततः जपसहित ध्यान में परिणत हो जाता है और समाधि की अवस्था में उसे आत्मसाक्षात्कार हो जाता है। यह गुरु मंत्र का आन्तरिक गूढ़ अर्थ है। (स्वामी चिदानंद)

गुरु के मुख में ब्रह्म का वास होता है। उनके द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होने पर निज रामस्वरूप की प्राप्ति हो जाती है। गुरु नियम व निष्ठा सिखाते हैं, जिसके आचरण से उनके मुख का ब्रह्म तुममें समावेश कर जाएगा।

समस्त प्राणी ब्रह्मस्वरूप है; लेकिन गुरु उनसे भी परे है। जिस समय साधक गुरु के चरण-कमलों में आत्मसमर्पण कर देता है, उसी समय वह मोक्ष का अधिकारी बन जाता है; किन्तु आत्मसमर्पण आकाश में पुष्प खिलाना है।

ज्ञान की नौका पर चढ़कर सद्गुरु को खेवैया बनाकर न्याय और सत्यता का डाँड़

लेकर माया-नदी को पार करना ही जीवन का रहस्य है।

गुरु का चरणोदक पापरूपी कीचड़ को सुखानेवाला, ज्ञानरूपी तेज का प्रकाश करनेवाला और सम्यक् प्रकार से संसाररूपी समुद्र को पार करनेवाला है।

ब्रह्म गुरु के मुख में स्थित है। यह गुरु के प्रसाद से ही प्राप्त होता है।

गुरु से अधिक तत्त्व नहीं है, न गुरु से अधिक तप है। गुरु-ज्ञान से ही परम तत्त्व का ज्ञान होता है।

गुरु की कृपा के प्रसाद से ही आत्मा को आनंद प्राप्त होता है और अन्तर्ज्ञान उदित होता है।

साधारण गुरुओं से श्रेष्ठ एक और श्रेणी के गुरु होते हैं, और वे गुरु हैं 'ईश्वर के अवतार'। वे केवल स्पर्श से, यहाँ तक कि इच्छामात्र से ही ईश्वर की सर्वोच्च अभिव्यक्ति होती है। उनके माध्यम के अतिरिक्त हम अन्य किसी भी उपाय से भगवान को नहीं देख सकते हैं। इसलिए हमें उनकी ही उपासना करनी चाहिए।

गुरुमूर्त्ति का ध्यान, गुरुचरण की पूजा मुख्य पूजा है। गुरु-वाक्य मूलमंत्र है और गुरु की कृपा ही मोक्ष का कारण है। गुरु की भक्ति से ही ज्ञान-विज्ञान और मोक्ष प्राप्त होता है, इसलिए गुरु के समान अन्य कोई नहीं है। गुरु-मार्ग के अवलम्बन करनेवाले का गुरु ही साध्य है।

(संतों के उद्‌गार)

दादूदेव दयाल की, गुरु दिखाई बाट।
ताला कुंजी लाइ करि, खोलैं सबै कपाट।।

—संत दादू दयाल ❖

प्रेरक प्रसंग :

एक रात को कोई चोर राजमहल में चोरी करने घुसा। उसे सुनाई दिया कि राजा रानी से कह रहा है– 'कल सबेरे गंगाजी के किनारे जो साधु ठहरे हुए हैं, उनमें से एक जन के साथ राजकन्या का विवाह रचाएँगे।' सुनते ही चोर ने सोचा– 'मैं भी क्यों न गंगा किनारे साधु बनकर बैठा रहूँ! यदि भाग्य जाग जाए, तो राजकुमारी के साथ विवाह हो जाएगा।' उसने वैसा ही किया। दूसरे दिन सबेरे राजा के कर्मचारी उस स्थान पर आकर एक-एक कर सब साधुओं को राजकन्या के साथ विवाह करने के लिए विनती करने लगे, पर कोई साधु राजी न हुआ। अंत में राजकर्मचारियों ने उस साधुवेशधारी चोर को आमन्त्रण दिया। पर चोर उस समय अपना मनोभाव प्रकट न कर थोड़ा चुप्पी साधे रहा। राजा के कर्मचारियों ने आकर राजा से कहा– 'एक युवक साधु हैं, वे शायद राजी हो सकते हैं; परन्तु और कोई साधु तैयार नहीं है।' तब राजा स्वयं उस साधुवेशधारी चोर के निकट आए तथा नाना प्रकार से उसकी आरजू-मिन्नत करने लगे; परन्तु राजा को सामने देखते ही उस चोर के मन में परिवर्तन हो गया। वह सोचने लगा– 'मैंने केवल साधु का वेश चढ़ाया है, इतने से ही राजा खुद आकर मेरी इतनी खुशामद कर रहा है, तब तो न जाने वास्तव में साधु बनने पर मुझे और क्या-क्या न मिलेगा।' इस विचार के परिणामस्वरूप उसने विवाह के प्रस्ताव को नकार दिया और वह वास्तव में यथार्थ साधु बनने के लिए प्रयत्न करने लगा। फिर उसने कभी विवाह नहीं किया और वह एक अच्छा साधु बन गया। तनिक देर के लिए साधु का वेश पहनकर साधुओं के बीच बैठते ही चोर का मन इतना बदल गया। सत्संग की महिमा का बखान नहीं किया जा सकता। ❖

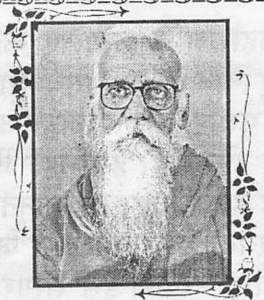

पूज्यपाद महर्षि हरिनन्दन परमहंसजी महाराज

गुरु-वचन

संतमत के वर्तमान आचार्य पूज्यपाद महर्षि हरिनन्दन परमहंसजी महाराज का यह प्रवचन दिनांक २८.०२.२०११ ई० को ग्राम-बेलगच्छी (अमौर) में पूर्णियाँ जिलाविशेषाधिवेशन के अवसर पर अपराह्णकालीन सत्संग में हुआ था।

प्रेषक—प्रो० डॉ० गुरु प्रसाद

बन्दउँ गुरु पद-कंज, कृपासिन्धु नररूप हरि ।
महामोह तमपुंज, जासु बचन रबिकर निकर ।।

मंचासीन श्रद्धेय महात्मागण, धर्मानुरागी सज्जनवृन्द, आदरणीय माताओ एवं पुण्यवती बहनो!

संसार का सृजन करनेवाले परम प्रभु परमात्मा ने चौरासी लाख किस्म के प्राणियों का सृजन किया है। उनमें मनुष्य को सबसे उत्तम कहा गया है। गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज ने लिखा है—

नर समान नहीं कवनिउ देही ।
जीव चराचर जाँचत जेही ।।

इस मनुष्य-शरीर के समान और कोई शरीर नहीं है। यह सबसे उत्तम शरीर है। क्यों ऐसा कहा गया? इसमें ज्ञान की विशेषता है और में ज्ञान नहीं है। अन्य शरीर में तो केवल चार बाते हैं—आहार, निन्द्रा, भय और मैथुन। उसमें यह ज्ञान नहीं है कि हम दुःख में हैं और दुःख को दूर करने का प्रयत्न करें। गाय, भैंस, बैल, कुत्ता, बिल्ली, कोई भी जीव-जंतु हो, बीमार पड़ जाने पर उनको यह ज्ञान नहीं है कि हम अपना इलाज करावें। डॉक्टर के पास जाएँ, उनके शरीर में काँटा गड़ जाय, तो उनको यह सामर्थ्य नहीं है कि इसको हम निकाल लें। उसमें तो केवल चार बातों का ज्ञान है—आहार, निद्रा, भय और मैथुन। गाय, भैंस, कुत्ता, बिल्ली सभी सोते हैं, जान का भय सबको है। एक कुत्ता है। उसको आप लाठी दिखाइये, तो वह भागेगा। सोचता है अगर नहीं भागेंगे, तो मारेगा। चिड़िया है। आप छड़ी उठाइये, वह उड़ जाएगी। उसको भी भय होता है। सन्तान उत्पन्न करना—यह काम भी उसके द्वारा होता है। इतनी ही बातें उनमें हैं। मनुष्य में ज्ञान की विशेषता है। लेकिन मनुष्य-शरीर में भी केवल कमाने खाने का ज्ञान हो, तब कोई विशेष बात नहीं है। कैसा ज्ञान होना चाहिये? अपने आपका ज्ञान कि मैं कौन हूँ, किस स्थिति में आ गया हूँ, हमें क्या करना चाहिये। हमलोगों को कोई पूछता है कि तुम कौन हो, तो हमलोग अपना नाम बता देते हैं। जब हमारा जन्म हुआ था, उस समय तो नाम नहीं रखा गया था। क्या उस समय हम नहीं थे? जब नाम नहीं रखा गया था, तब भी हम थे। नाम बतला देने से अपना परिचय नहीं हुआ। असली बात यही है कि हम अपने आपको नहीं जान पा रहे हैं कि हम कौन हैं। आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विरजानन्द के पास गये, उनको प्रणाम किए। स्वामी विरजानन्दजी बहुत उच्च कोटि के सन्त थे। स्वामी विरजानन्दजी ने उनसे पूछा—'तुम कौन हो?' उन्होंने कहा—'महाराज यही जानने के लिए तो मैं आपके पास आया हूँ कि मैं कौन हूँ? इस बात को मैं नहीं जानता हूँ।' कितनी सच्चाई है उसमें। सर्वसाधारण लोग कहेंगे कि क्या कह रहे हैं। इनसे पूछा गया, तो इनको अपना नाम कहना चाहिये। ये कहते हैं—'मैं नहीं

जानता हूँ। इसी बात को जानने के लिए मैं आया हूँ।' ठीक से विचार करके देखिये, हमलोग अपना नाम बतला देते हैं; लेकिन हमलोग अपने को नहीं जानते हैं कि हम कौन हैं? इस शरीर में हम कहाँ से आ गये, शरीर छूटने पर हम फिर कहाँ जाएँगे, इस समय हमारी क्या स्थिति है, यह सब कुछ नहीं जानते। पहले की बात कुछ नहीं जानते, अभी हम शरीर में कहाँ पर हैं, सो नहीं जानते। शरीर से निकल जाने पर हम कहाँ जाएँगे, सो नहीं जानते, असल में हम अपने आपको जानते ही नहीं है। जैसे छोटा बच्चा पखाना पर लेटा हुआ रहता है, उसको कहाँ यह ज्ञान कि हम पखाना पर हैं। अगर माँ उसको नहीं उठावे, तो उसी पर पड़ा रहेगा। नहीं हटावे तो हो सकता पखाना मुँह में भी ले ले। उसको यह ज्ञान नहीं है। ठीक उसी तरह से हमलोग भी विषयों में लिपटे हुए हैं। जिस संसार में हमलोग हैं, उसको सन्त-महापुरुषों ने कहा कि यह भवसागर है। यहाँ हमारी दुर्गति हो रही है, दुःख का भोग भोग रहे हैं। संत सूरदासजी महाराज भवसागर से उबारने के लिए परम प्रभु परमात्मा से कहते हैं–

अबके माधव मोहि उधारि।
मगन हौं भव अम्बु निधि में, कृपा सिंधु मुरारि ।।

जब कोई समझे कि हम बंधन में हैं, तब न वे बंधन से निकलने का प्रयास करेंगे। जब बंधन को समझे ही नहीं, तब क्या प्रयास करेंगे। अगर व्यक्ति का दोनों पैर पंक में धँस जाए और अपने से नहीं निकल पा रहे हैं, तो दूसरों को पुकारते हैं; लेकिन बच्चा का पैर धँसा हुआ है, तो नहीं कह सकता है कि हमको निकाल दीजिये। वह तो उसी कीचड़ पर लेट जाएगा। निकालने के लिए वह प्रयास नहीं करेगा कि कोई हमको निकाल दे। यही हालत है हमलोगों की। संसार-सागर में हम थपेड़े खा रहे हैं, कष्ट पा रहे हैं; लेकिन इसी में हम मगन हैं। संत सूरदासजी महाराज ने इसीलिए कहा–

मगन हौं भव अम्बु निधि में, कृपा सिंधु मुरारि।

कहते हैं–हे मुरारि! हम तो अज्ञानता के कारण इसी में मगन होकर हैं। हम नहीं जानते कि हम दुःख में पड़े हुए हैं। तुम तो जानते हो। तुम सर्वसमर्थ हो, सबके हृदय की बात जानते हो, अबके माधव मोहि उधारि। इस संसार को सागर कहा। सागर किसे कहते हैं? समुद्र को। समुद्र में जल रहता है। अगर जल नहीं रहे समुद्र में, तो उसको समुद्र कहा जाएगा? नदी में जल नहीं रहे, तो उसको नदी कहा जाएगा? जल रहने पर ही नदी, जल रहने से ही समुद्र। समुद्र में अगाध जल रहता है। इस संसार को भी समुद्र कहा, तो इसमें जल क्या है? संत सूरदासजी महाराज कहते हैं–

नीर अति गम्भीर माया, लोभ लहरि तरंग।
लिये जात अगाध जल में, गहे ग्राह अनंग ।।

माया रूपी जल इस संसार में भरा हुआ है। माया किसे कहते हैं? जो देखने में आवे; लेकिन सत्य नहीं हो। अभी हमलोग क्या देखते हैं? संसार के दृश्य को देखते हैं। माता, पिता, भाई, बहन, स्त्री, पुत्र, धन, सम्पत्ति, भोग-सामग्री संसार के अनेक तरह का दृश्य सब कुछ देख रहे हैं। यही है माया। माया इसको क्यों कहा? इसलिए कि यह सब दिन रहनेवाला नहीं है। शरीर किसी का सब दिन नहीं रहता। जो सब दिन नहीं रहे, कभी देखने में आवे, तो उसी को माया कहते हैं। पहले यह शरीर नहीं था, अभी है; लेकिन बाद में भी नहीं रहेगा, इसलिए शरीर भी सत्य नहीं है, यह माया है। हम इस शरीर में आने के पहले भी थे, अभी भी हैं, शरीर छूट जाएगा, तब भी रहेंगे। शरीर के अन्दर जो 'हम' हैं, वह माया नहीं है। हमारा शरीर माया है। हमको जो कुछ भी अभी प्राप्त हुआ है, जिसको अभी हम इन्द्रियों के द्वारा जान रहे हैं, वह माया है। पिताजी को, माता जी को माया क्यों कहा?

इसलिए कहा कि पिताजी अथवा माताजी के शरीर को ही तो देख पाते हैं। शरीर में पिताजी थे, वे शरीर छोड़कर जब निकले, तो क्या हम देख पाये? शरीर में रहनेवाले को नहीं देख पाये। जब वे शरीर में थे, तब भी नहीं जान पाये, शरीर से निकल गये, तो भी हम देख नहीं पाये। उस सत्य को हम देख नहीं पाते हैं। पिताजी शरीर त्याग दिये, उसके शरीर को हम जला दिये, नष्ट हो गया। यह शरीर है असत्य, शरीर है माया। यही माया रूपी जल इस संसार- सागर में भरा हुआ है।

नीर अति गम्भीर माया, लोभ लहरि तरंग।

संसार-सागर में माया रूपी जल भरा हुआ है, इसमें लोभ का तरंग उठ रहा है। यही लोभ हमें खींचता हुआ अगाध जल में ले जा रहा है। अनंग कहते हैं–कामदेव को। काम, इच्छा, चाहना–यह हमको अगाध जल में ले जा रहा है। इससे पार लगानेवाले कौन होते हैं? सन्त राधास्वामी ने कहा–

भवसागर धारा अगम, खेवटिया गुरु पूर।
नाव बनाई शब्द की, चढ़ बैठे कोइ सूर।।

संसार-सागर की धारा बड़ा अगम है, इससे अपने आप कोई नहीं पार हो सकता। गोस्वामीजी ने लिखा है–

बिनु गुरु भवनिधि तरै न कोई।
जौं बिरंची संकर सम होई।।

बिना गुरु के संसार-सागर से कोई पार नहीं हो सकता। इसके लिए गुरु चाहिये। कैसा गुरु? पूरे और सच्चे गुरु। पूरे और सच्चे गुरु किसे कहते हैं? जो परमात्मा को प्राप्त किए होते हैं। परमात्मा को जो प्राप्त कर लेते हैं, वे परमात्मा ही हो जाते हैं। जैसे–कोई भी जल हो– गंगा, यमुना, सरस्वती, कोशी अथवा किसी भी नदी-नाला का ही जल क्यों न हो, समुद्र में जाकर वह समुद्र का जल कहलाता है। तब यह नहीं कहा जाता कि यह गंगा का जल है, यमुना का जल आदि-आदि का जल है। सब मिलकर हो जाता है समुद्र का जल। उसी तरह से जीव परमात्मा को प्राप्त करके परमात्मा ही हो जाता है। परमात्मा का अंश तो जीव है ही। जैसे गंगा जल लेकर बोतल में रख लिया। जीव तो है परमात्मा का अंश। केवल आवरण के अन्दर आ गया है। शरीर में रहनेवाला जीवात्मा, परमात्मा का अंश है।

ईश्वर अंश जीव अविनाशी।
चेतन अमल सहज सुख रासी।।

गंगा जल में अगर कुछ गोबर, मिट्टी, खड़-पतार और गंदी-गंदी चीजें मिली हुई हैं, तो वह जल ग्रहण करने के योग्य नहीं होगा; लेकिन उसको गंगा में उड़ेल दीजिए, तब वह हो जाएगा गंगाजल। 'गंग मिलत होय जात है गंगा।' उसी तरह से जीव संसार में आकर विषय रूपी वासना में लोट-पोट होकर अपवित्र बन गया है। शरीर इन्द्रियों के संग में रहकर अपवित्र हालत में है; लेकिन यही जीव जब परमात्मा को प्राप्त कर लेता है, तब परमात्मा ही हो जाता है। जिन्होंने परमात्मा का साक्षात्कार कर लिया है, वे ही सन्त कहलाते हैं। वे ही सन्त-महापुरुष जीव को उबारने के लिए संसार में आते हैं। कोई गरीब व्यक्ति दूसरी जगह जाकर धन-सम्पत्ति कमाकर सम्पत्तिवान बन जाता है, तो वह अपने परिवार को भी वहीं ले जाता है, ठीक उसी तरह सन्त-महापुरुष सुख के धाम परम प्रभु परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं, तो फिर और लोगों को उबारने के लिए पुनः पुनः शरीर धारण करते हैं–जीव हित आपही आवैं।

सन्त कबीर साहब ने कहा–

वृक्ष कबहुँ नहीं फल भखे, नदी न संचै नीर।
परमारथ के कारणे, साधुन धरा शरीर।।

वृक्ष फलता है; लेकिन उस फल को वह स्वयं नहीं खाता। नदी में पानी रहता है; लेकिन उस पानी को वह स्वयं नहीं पीती। वह दूसरों के लाभ के लिए होता है। उसी तरह से मानव-कल्याण के लिए सन्त-महापुरुष आते हैं।

जो शांति स्वरूप परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं, वे सन्त कहलाते हैं। ऐसे जो महापुरुष होते हैं, वे पूरे और सच्चे सद्गुरु कहलाते हैं। वे ही जीव को उबार सकते हैं और में सामर्थ्य कहाँ है। गुरु महाराज एक बार मौज में आकर कह रहे थे–जीव आज से ही नहीं, जब से यह संसार है, तब से जीव परमात्मा से अलग होकर विषयों में लिपटकर पापों के बोझ से लदा हुआ है। इस जीव को उबारने की शक्ति केवल सन्त-महापुरुषों में होती है। उन्होंने कहा–सर्वसाधारण लोगों के मन में भी गुरु बनने की चाहना होती है। जीव को कौन उबारेगा? जो जन्म-जन्मांतर के बोझ से लदा हुआ है, उसको उबारने का सामर्थ्य किनको है? पूरे और सच्चे सद्गुरु ही उबार सकते हैं।

भाव सागर धारा अगम खेवटिया गुरु पूर ।

इसीलिए जो सन्त सद्गुरु की शरण में रहकर उनके ज्ञान को अपनाये हैं, वे तो सँभल जाते हैं। साधारण व्यक्ति जिनको अधिकार है दीक्षा देने का, वे सिर्फ यही समझते हैं कि मैं गुरु के आदेश का पालन कर रहा हूँ। पूज्य सन्तसेवीजी महाराज थे। उन्होंने अपने प्रवचन में कहा था–उनके प्रवचन की एक पुस्तक है साधना में सफलता कैसे? पृष्ठ ७६ में देखिये उन्होंने लिखा है–हमलोगों के परमाराध्य श्रीसद्गुरुदेव ने हमलोगों को भजन-भेद देने का आदेश दिया है। उनके आदेशानुसार हम भजन-भेद बतलाते हैं, हम गुरु नहीं हैं। गुरु तो वे थे और अभी भी हैं। उनका आदेश हैं भजन-भेद बतलाओ, तो हम उनकी आज्ञा का पालन कर रहे हैं; लेकिन गुरु वे ही हैं। वे ही जीव को उबारनेवाले हैं। उन्होंने फिर आगे कहा–परमाराध्य गुरुदेव ने सत्संग रूपी फुलवाड़ी लगाई और उस फुलवाड़ी की सेवा करने का भार हमलोगों को दिया। इसलिए हम माली हैं, मालिक नहीं। मालिक तो वे स्वयं थे।

आज्ञा सम न सुसाहिब सेवा ।

हम उनकी आज्ञा का पालन कर रहे हैं। पूरे और सच्चे सद्गुरु वे थे। पूरे और सच्चे सत्गुरु ही जीव को भवसागर से खेवटिया बनकर पार करते हैं। कौन चीज पर चढ़ाकर वे पार लगाते हैं? नाविक नाव पर चढ़ाकर नदी से पार करते हैं, संसार-सागर से जो पार उतारते हैं, उसके लिए क्या नाव है? सन्त राधास्वामी कहते हैं–

नाव बनाई शब्द की चढ़ बैठे कोइ सूर ।

शब्द रूपी नाव पर चढ़ाकर पार करते हैं। वह शब्द कौन-सा है? सबके घट में परमात्मा की ध्वनि हो रही है। 'विमल विमल अनहद ध्वनि बाजे।' लेकिन सुनने में कब आवेगा? 'सुनत बनै जाको ध्यान लगे।' जब ध्यान लगेगा, तब परमात्मा की ध्वनि अपने अन्दर में सुन सकेंगे। वही ध्वनि है जिनको सुन लेंगे, तो वे नाव बन जाएँगे। उसपर आप बैठ जाएँगे। जैसे हवाई जहाज पर बैठ जाने पर अमेरिका जाना चाहते हैं, तो आपको चलना नहीं पड़ेगा, आप पहुँच जाएँगे। ठीक उसी तरह से जो शब्द रूपी जहाज पर बैठ जाते हैं, मतलब शब्द की खोज कर लेते हैं, नादानुसंधान सुरत-शब्द-योग का अभ्यास करते हैं, उनके लिए समझ लीजिये कि शब्द रूपी जहाज पर बैठ चुके हैं। वे गिरेंगे नहीं, निश्चित रूप से पहुँचेंगे। 'नाव बनाई शब्द की चढ़ बैठे कोइ सूर।' इसीलिए सच्चे सन्त सद्गुरु की शरण में जाने की आवश्यकता है। अगर हम चाहते हैं कि संसार-सागर से पार उतर जाएँ, तो सच्चे सन्त सद्गुरु की शरण में जाना पड़ेगा। गुरु महाराज की वाणी के पाठ में आपलोगों ने सुना–

आहो भाई होऊ गुरु आश्रित हो।

गुरु बिनु अंधकार सूझाए न कछु सार होऊ गुरु आश्रित हो।

संसार के लोगों को गुरु महाराज समझाते हैं, गुरु के शरण में जाओ, उनके आश्रित होओ।

जबतक उनके आश्रित नहीं होओगे, तबतक संसार-सागर से पार नहीं उतर सकोगे।

बिन गुरु अंधकार सूझए न कछु सार।

अभी हमारी क्या स्थिति है? आँख बन्द करते हैं, तो अंधकार मालूम पड़ता है। आँख खोलकर देख रहे हैं, तो आपलोगों को देखते हैं; लेकिन अंधेरी रात में कमरे के अन्दर किवाड़ी-खिड़की बन्द रहने पर आँख खोलकर भी देखेंगे, तो घर के सामान को देख सकेंगे? नहीं देख सकने का क्या कारण? हम हैं अन्दर में। अन्दर में घोर अंधकार है। बाहर में अंधकार रहने पर नहीं देखने में आता है। बाहर में जो अभी देखने में आ रहा है, सूर्य के प्रकाश के कारण आँख बंद करते हैं, तो सामने अंधकार मालूम पड़ता है। उसी अंधकार में हम हैं। यह अंधकार कबतक रहेगा? जबतक गुरु की शरण में नहीं जाएँगे, तबतक इस अंधकार से निकलने का मार्ग नहीं मिलेगा। अंधकार से नहीं निकल पाये, तो हमारी क्या हालत होगी? सन्त कबीर साहब ने कहा–

एक तो अंधेरी कोठरी, जामें दिया न बाती हो।
बहियाँ पकड़ि जम ले चले, कोइ संग न साथी हो।।

अमावस्या की रात्रि है। अँधेरी कोठरी में किसी बाहर के अतिथि को सुला दीजिए। जाड़े की रात है किवाड़ी-खिड़की सब बन्द है, बिजली की रोशनी है; लेकिन बिजली गुम हो गई। उसी वक्त यदि पेशाब करने के लिये कमरे से बाहर निकलना है। कुछ नहीं दिखाई पड़ता है कि कहाँ पर है दरवाजा। कभी कुर्सी, कभी टेबुल, कभी आलमारी, कभी किवाड़ से टकरा जाते हैं। छोटा-सा कमरा उसमें से भी निकलने में कठिनाई होती है। कई रोज पहले रानीगंज में थे। जनरेटर तुरंत एकाएक बन्द हो गया। टॉर्च सिरावन में नहीं था। वेग में था। अब कमरा के अन्दर देखेंगे कैसे? किधर टटोलें, कुछ सूझे ही नहीं। छोटा-सा कमरा में यह हालत होती है। इस शरीर के अन्दर जो हम हैं तो है कहाँ पर हैं? आँख बन्द करके देखिये, अन्धकार मालूम पड़ता है। अगर हम जीवन भर इसी अंधकार में रह गये तब हमारी क्या हालत होगी? जैसे कैद में कैदी कब तक रहता है, जबतक की उसकी अवधि समाप्त नहीं होती है। अवधि समाप्त होने पर तो उसको निकलना पड़ता है। इस शरीर में निकलने का मार्ग है, वह मार्ग दूर भी नहीं है। जहाँ पर हम हैं, वहीं पर वह मार्ग भी है; लेकिन वहाँ पर है घोर अंधकार। इस अंधकार के कारण उस मार्ग को देख नहीं पाते हैं। यही कारण होता कि जीव जीवन भर इस शरीररूपी जेलखाना से निकलने में समर्थ नहीं हो पाता है और इसी कारण जम के फंदे में फँसना पड़ता है। इसीलिये सन्त कबीर साहब ने कहा–

बहियाँ पकड़ि जम ले चले, कोइ संग न साथी हो।

जब निकल नहीं सकता, तब जम के फंदे में फँसना पड़ता हैं। जमलोक जाना पड़ता है, जम की यातना सहनी पड़ती है।

जबतक अपने अंदर प्रकाश नहीं हो जाता, तबतक विषय की आशा नहीं छूटती है। यह विषय की आशा नहीं छूटने पर सुख नहीं मिलता। गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा–

जब लग नहिं निज हृदि प्रकाश, अरु विषय आस मन माहीं।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि, भ्रमत सपनेहुँ सुख नाहीं।।

तबतक संसार की योनियों में घूमते रहना पड़ता हैं। स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता। अवश्य ही भ्रमवश विषयों में हमलोगों को विषय में सुख का बोध होता है; लेकिन यह सुखदायक नहीं है। ❖

राम नाम निज औषधि, सद्गुरु देह बताय। औषधि खाय रु पथ रहै, ताकी बेदन जाय।।

अर्थ–संत कबीर साहब कहते हैं कि इस संसार में कोई भी काल से नहीं बच सकता। सद्गुरु नाम के बिना तो काल अवश्य खा लेगा। इस काल से तो केवल वही बच सकते हैं, जिनके पास सद्गुरु का नाम है। ऐसे नाम के प्रेमियों को देखकर काल स्वयं डरकर भाग खड़ा होता है।

धर्मपथ के सहायक गुरु

–श्रीरामकृष्ण परमहंसजी महाराज

गुरु का स्वरूप

गुरु कौन है? एकमात्र ईश्वर ही सारे जगत् के गुरु हैं। जो गुरु के बारे में मनुष्य-बुद्धि रखता है, उसके साधन-भजन का क्या फल होगा? गुरु के बारे में मनुष्य-बोध नहीं रखना चाहिए। इष्ट-दर्शन होने के पहले शिष्य को प्रथम गुरु के दर्शन होते हैं। फिर ये गुरु ही शिष्य को इष्टदेव के दर्शन करा देते हैं तथा स्वयं धीरे-धीरे उस इष्टरूप में विलीन हो जाते हैं। तब शिष्य गुरु तथा इष्टदेव को अभिन्न, एकरूप देखता है। इस अवस्था में शिष्य जो वर माँगता है, गुरु उसे वही देते हैं। यहाँ तक कि गुरुदेव उसे सर्वोच्च निर्वाण की अवस्था तक दे सकते हैं या अगर शिष्य चाहे, तो वह उपास्य-उपासकरूपी भाव-संबंध को बनाए रखकर द्वैत अवस्था में भी रह सकता है। वह जैसा गुरु उसके लिए वैसा ही कर देते हैं।

मनुष्य-गुरु कान में मंत्र फूँकते हैं; परन्तु जगत्गुरु प्राणों में मंत्र जगा देते हैं।

गुरु मानो मध्यस्थ हैं। जैसे मध्यस्थ प्रेमिक को प्रेमिक के साथ मिला देता है, वैसे ही गुरु भी साधक को इष्ट के साथ मिला देते हैं।

गुरु मानो गंगाजी हैं। गंगा में लोग कितना कूड़ा-करकट और गंदी चीजें डालते हैं; परन्तु इससे उसकी पवित्रता घट नहीं जाती। इसी प्रकार गुरु पर भी निन्दा, अपमान आदि बातों का परिणाम नहीं होता।

वैद्य की तरह आचार्य भी तीन प्रकार के होते हैं–उत्तम, मध्यम और अधम। जो वैद्य आकर सिर्फ रोगी की नाड़ी देख, दवा बताकर 'यह दवा लेना जी' कहकर चला जाता है, रोगी ने दवा ली या नहीं इसकी कोई खबर नहीं लेता, वह अधम वैद्य है। इसी तरह कुछ आचार्य केवल उपदेश दे जाते हैं, शिष्य उनका पालन करता है या नहीं, इसकी वे खबर नहीं रखते। दूसरी श्रेणी के वैद्य रोगी को केवल दवा लेने के लिए कहकर नहीं चले जाते; परन्तु यदि रोगी दवा नहीं लेना चाहता हो, तो उसे दवा लेने के लिए तरह-तरह से समझाते-बुझाते हैं। ये मध्यम श्रेणी के वैद्य हुए। इसी तरह जो आचार्य शिष्यों के हित के लिए उन्हें बार-बार प्रेम से समझाते हैं, जिससे वे उपदेशों को धारण कर सकें और तदनुसार चल सकें, वे मध्यम श्रेणी के आचार्य हैं। अंतिम श्रेणी के और उत्तम वैद्य वे हैं, जो अगर रोगी मीठी बातों से न माने, तो बल का भी प्रयोग करते हैं। जरूरत पड़ने पर रोगी की छाती पर घुटना रखकर जबरदस्ती दवा पिला देते हैं। उसी प्रकार, उत्तम श्रेणी के आचार्य शिष्य को ईश्वर के पथ पर लाने के लिए आवश्यक हो, तो बल तक का प्रयोग करते हैं।

गुरु का प्रयोजन

जिन-जिन के निकट कोई शिक्षा प्राप्त होती हो, उन सभी को गुरु न कहकर एक निर्दिष्ट व्यक्ति को ही गुरु कहने की क्या आवश्यकता है? किसी अनजान जगह जाना हो, तो जो रास्ता जानता है, ऐसे किसी एक व्यक्ति के निर्देशानुसार ही जाना चाहिए। अनेक लोगों से रास्ता पूछते रहने पर गड़बड़ी हो जाती है। वैसे ही ईश्वर के निकट जाना हो, तो एक अनुभवी गुरु के निर्देशानुसार चलना चाहिए। इसीलिए एक गुरु का प्रयोजन है।

जो खुद शतरंज खेलते हैं, वे बहुत समय नहीं समझ पाते कि कौन-सी चाल ठीक होगी; परन्तु तटस्थ रहकर खेल देखते रहते हैं, वे खेलनेवालों की चाल से अच्छी चाल बता

सकते हैं। संसारी लोग सोचते हैं कि हम बड़े बुद्धिमान हैं; परन्तु वे धनवान, विषय-सुख आदि में आसक्त रहते हैं। वे स्वयं खेल में डूबे रहते हैं, ठीक चाल नहीं समझ पाते; परन्तु संसार-त्यागी साधु-महात्मा विषयों से अनासक्त होते हैं। वे संसारियों से अधिक बुद्धिमान होते हैं। वे खुद नहीं खेलते, इसलिए अच्छी चाल बता सकते हैं। इसीलिए, धर्मजीवन यापन करना हो, तो जो साधु-महात्मा ईश्वर का ध्यान-चिन्तन करते हैं, जिन्होंने उन्हें प्राप्त कर लिया है, उन्हीं की बातों पर विश्वास रखकर चलना चाहिए। यदि तुम्हें मामले-मुकदमे की सलाह चाहिए हो, तो तुम वकील की ही सलाह लो न कि किसी और की।

यदि तुम्हारे भीतर ईश्वर के प्रति ठीक-ठीक अनुराग हो, उन्हें जानने की स्पृहा उत्पन्न हो, तो अवश्य ही वे तुम्हें सद्गुरु से मिला देंगे। साधक को गुरु के लिए चिन्ता नहीं करनी पड़ती।

ठीक-ठीक आन्तरिकता के साथ व्याकुल प्राणों से यदि कोई उन्हें पुकार सके, तो उसके लिए गुरु की आवश्यकता नहीं होती; परन्तु साधारणतया ऐसी व्याकुलता नहीं दिखाई देती, इसीलिए गुरु की आवश्यकता है। गुरु एक ही होता है; परन्तु उपगुरु अनेक हो सकते हैं। जिस किसी के पास कुछ शिक्षा प्राप्त हो, वही उपगुरु है। अवधूत दत्तात्रेय के चौबीस उपगुरु थे।

गुरु-शिष्य संबंध

समुद्र में एक प्रकार की सीपी होती है, जो स्वाति नक्षत्र की वर्षा की बूँद के लिए सदा मुँह बाए पानी पर तैरती रहती है; किन्तु स्वाति की वर्षा की एक बूँद जल मुँह में पड़ते ही वह मुँह बंद कर सीधे समुद्र की गहरी सतह में डूब जाती है तथा वहाँ उस जलविन्दु से मोती तैयार करती है। इसी तरह यथार्थ मुमुक्षु साधक भी सद्गुरु की खोज में व्याकुल होकर इधर-उधर भटकता रहता है; परन्तु एक बार सद्गुरु के निकट मंत्र पा जाने के बाद वह साधना के अगाध जल में डूब जाता है तथा अन्य किसी ओर ध्यान न देते हुए सिद्धि-लाभ तक साधना में लगा रहता है।

ऐसे (साक्षात्कारी) गुरु यदि पण्डित या शास्त्रज्ञ न भी हो, तो घबराने का कारण नहीं। उन्होंने पुस्तकीय विद्या भले ही न सीखी हो, पर उनमें यथार्थ ज्ञान की कभी कमी नहीं होती। पुस्तक पढ़कर भला क्या ज्ञान होगा? ऐसे व्यक्ति के निकट ईश्वरीय ज्ञान का अनन्त भण्डार होता है।

कोई व्यक्ति अपने गुरु के बारे में तर्क-वितर्क कर रहा था। श्रीरामकृष्ण ने उससे कहा– 'तुम फिजूल समय क्यों बरबाद कर रहे हो? तुम्हें इन सब बातों से क्या मतलब? तुम्हें मोती चाहिए, तो मोती लेकर सीपी को फेंक क्यों नहीं देते? गुरु ने जो मंत्र दिया है, उसे लेकर डूब जाओ, गुरु के गुण-दोषों की ओर मत देखो।'

कोई तुम्हारे गुरु की निन्दा करता हो, तो कभी मत सुनो। गुरु माता-पिता से भी बड़े हैं। यदि कोई तुम्हारे सामने तुम्हारे माता-पिता की निन्दा करे, तो क्या तुम सहन करोगे? यदि जरूरत पड़े, तो लड़कर भी अपने गुरु की मर्यादा को बनाए रखो।

शिष्य को गुरु की निन्दा कभी नहीं करनी चाहिए। उसे सदा गुरु की आज्ञा का पालन करना चाहिए। कहावत है– 'यद्यपि मेरा गुरु कलवार घर जाय, तथापि मेरा गुरु नित्यानंद राय।' अर्थात् मेरे गुरु यदि शराब भी पीएँ, तो भी वे पवित्र हैं, निर्दोष हैं।

सच्ची भक्ति हो, तो सामान्य वस्तुओं से भी ईश्वर का उद्दीपन होकर साधक भाव में विभोर हो जाता है। चैतन्य महाप्रभु की कथा सुनी नहीं? एक बार किसी गाँव से गुजरते समय चैतन्यदेव ने सुना कि हरि-संकीर्तन में

बजानेवाला मृदंग इसी गाँव की मिट्टी से बनता है। सुनते ही वे बोल उठे—'इस मिट्टी से मृदंग बनता है' और एकदम बाह्यज्ञान खोकर भावसमाधि में मगन हो गए। इस मिट्टी से मृदंग बनता है, उस मृदंग को बजाते हुए हरिनाम गाया जाता है, वे हरि सबके प्राणों के प्राण हैं, वे सुन्दर के भी सुन्दर हैं। इस तरह की विचार-परम्परा एकदम क्षणमात्र में उनके चित्त में समा गई और उनका चित्त हरि में स्थिर हो गया।

इसी प्रकार, जिसमें गुरु के प्रति सच्ची भक्ति होती है, उसे गुरु के सगे-संबंधियों को देखकर गुरु का ही उद्दीपन होता है। इतना ही नहीं, गुरु के गाँव के लोगों को देखने पर भी उसे उस प्रकार की उद्दीपन होती है और वह उन्हें प्रणाम कर उनकी चरणधूलि ग्रहण करता है, उन्हें खिलाता-पिलाता है, उनकी सेवा-सुश्रूषा करता है।

ऐसी अवस्था होने पर फिर गुरु के दोष दिखाई देते। इसी अवस्था में यह कहा जा सकता है कि 'यद्यपि मेरा गुरु कलवार घर जाय, तथापि मेरा गुरु नित्यानंद राय।' अन्यथा, मनुष्य में कुछ-न-कुछ दोष तो रहेंगे ही—केवल गुण-ही-गुण नहीं रह सकते; परन्तु अपनी भक्ति के कारण वह शिष्य गुरु को मनुष्य की दृष्टि से नहीं देखता, वह उन्हें भगवान के ही रूप में दिखाई पड़ता है, उसी प्रकार इस शिष्य को भी सब कुछ ईश्वरमय ही दिखाई देता है। उसकी भक्ति ही उसे दिखा देती है कि ईश्वर ही सब कुछ हैं, वे ही गुरु, पिता, माता, मनुष्य, पशु, जड़, चेतन—सब कुछ बने हैं। ❖

अभागे कौन और भाग्यशाली कौन?

मनुष्य का जीवन भोग के लिए कदापि नहीं है। मानव-जीवन एक बहुत बड़ी निधि है और इसको खो देना बहुत बड़ा अपराध है। यह अपराध भगवान के प्रति है।

भोग-जीवन में आस्था और भोग-जीवन की लिप्सा ही सारे अनर्थों की जड़ है। इसमें से हम सभी को निकलना है। जो निकल गया, वह निकल गया। जो निकला नहीं, उसे निश्चित पछताना पड़ेगा। मनुष्य-जीवन को प्राप्त करके जो भगवत्प्राप्ति के प्रयास में नहीं लगा, उसको अवश्यमेव पछताना पड़ेगा।

जीवन में मोड़ लाना है। भोगों की ओर उन्मुख जीवन को भगवान की ओर लगाना है। भगवान के सम्मुख होना है। गति मंद हो, तो कोई बात नहीं। एक ही पग आगे बढ़ पाए, तो कोई चिन्ता नहीं, पर भोगों को पीठ देकर भगवान की ओर बढ़ना है।

भगवान की ओर हम मुख करेंगे, तो भगवान हमारी ओर मुख करेंगे। भगवान की ओर हम चलेंगे, तो भगवान हमारी ओर चलेंगे। भगवान की ओर मुख होने से भगवान के मिलने में विलम्ब नहीं होगा।

भगवान की ओर सम्मुख होने की कसौटी क्या है? बिल्कुल सीधी बात है। भोग सुहाये नहीं। भोगों से विमुख होने पर वे सुहाएँगे, कैसे? यदि भोग सुहाते हैं, तो हम उनके सम्मुख हैं। भोगों के सम्मुख और भगवान के विमुख होने से सुख और शांति नहीं मिल सकती—**'राम विमुख सपनेहुँ सुख नाहीं।'** वे लोग अभागे हैं, जो भगवान का परित्याग करके विषयों से अनुराग करते हैं—

सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं विषय अनुरागी॥

भाग्यशाली कौन है? भाग्यशाली वह है, जो विषयों का वमनवत् परित्याग कर देता है और श्रीहरि के चरणकमलों से अनुराग करता है—

रमा विलास राम अनुरागी। तजत वमन इव नर बड़भागी॥

भोगों से विमुखता और भगवान की ओर सम्मुखता—यहीं से मानव की मानवता का आरम्भ होता है।

(साभार—कल्याण से) ❖

सद्गुरु : मनुष्यरूप में साक्षात् नारायण

(स्वामी विवेकानन्द का अनुभव)

सुविख्याता स्वामी विवेकानन्द, समर्थ सद्गुरु श्रीरामकृष्ण परमहंस के शरणागत होकर ही कृतार्थ हुए। वे भक्ति के विषय में कहते हैं– 'गुरु की कृपा से मनुष्य में छिपी हुई अलौकिक शक्तियाँ विकसित होती हैं, उसे चैतन्य प्राप्त होता है तथा उसकी आध्यात्मिक उन्नति होती है और अंत में वह नर से नारायण हो जाता है। सत्य-ज्ञान-आनन्दस्वरूप सद्गुरु को संसार ईश्वर-तुल्य मानता है। शिष्य शुद्धचित्त, जिज्ञासु और परिश्रमी होना चाहिए। जब शिष्य अपने को ऐसा बना लेता है, तब श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ, निष्पाप, दयालु और प्रबोधचतुर समर्थ सद्गुरु उसे मिलते हैं। सद्गुरु शिष्य के नेत्रों में ज्ञानांजन लगाकर उसे दृष्टि देते हैं। ऐसे सद्गुरु बड़े भाग्य से जब मिलें, तब अत्यंत नम्रता, विमल सद्भाव और दृढ़ विश्वास के साथ उनकी शरण लो, अपना सम्पूर्ण हृदय उन्हें अर्पण करो, उनके प्रति अपने चित्त में परम प्रेम धारण करो, उन्हें प्रत्यक्ष परमेश्वर समझो। इससे आप भक्ति एवं ज्ञान का समुद्र प्राप्त कर कृतकृत्य हो जाओगे।

महात्मा, सिद्ध पुरुष ईश्वर के अवतार होते हैं। वे केवल स्पर्श से, एक कृपा-कटाक्ष से, केवल संकल्पमात्र से भी शिष्य को कृतार्थ कर देते हैं, पर्वत जैसे पापों का बोझ ढोनेवाले भ्रष्ट जीवन को भी अपनी दया से क्षणार्ध में पुण्यात्मा बनाते हैं। वे गुरुओं के गुरु है। मनुष्यरूप में प्रकट होनेवाले साक्षात् नारायण हैं। मनुष्य उन्हीं के रूप में परमात्मा को देख सकता है।

अलख पुरुष की आरसी, सद्गुरु की ही देह।
लखा जो चाहे अलख को, इन्हीं में तू लख लेह ।।

भगवान निर्गुण-निराकार हैं, पर हमलोग जबतक मनुष्य हैं (देहभाव में हैं), तबतक हमें उन्हें मनुष्यरूप में ही पूजना चाहिए। तुम चाहे जो कहो, चाहे जितना प्रयत्न करो, पर तुम्हें मनुष्यरूपी (सगुण) परमेश्वर का ही भजन करना होगा। निर्गुण-निराकार का चाहे कोई कितना ही पाण्डित्य बधारे, सगुण का तिरस्कार करे, अवतारों की निन्दा करे, सूर्य-चन्द्र, तारागणों को दिखाकर बुद्धिवाद से उन्हीं में देवत्व देखने को कहे, पर उसमें यथार्थ आत्मज्ञान कितना है, यह यदि तुम देखो, तो वह केवल शून्य है। हमलोग मनुष्य हैं, परमात्मा हमसे सगुणरूप में सद्गुरुरूप में ही मिलते हैं, इसमें कुछ भी संदेह नहीं।'

स्वामी विवेकानन्दजी आगे कहते हैं– 'भगवान से मिलने की इच्छा करनेवाले मुमुक्षु के नेत्र श्रीगुरु ही खोलते हैं। गुरु और शिष्य का संबंध पूर्वज और वंशज के संबंध जैसा ही है। श्रद्धा, सच्चाई, नम्रता, शरणागति और आदरभाव से शिष्य गुरु का मन मोह ले, तो ही उसकी आध्यात्मिक उन्नति हो सकती है। विशेष रूप से ध्यान में रखने की बात यह है कि जहाँ गुरु-शिष्य का नाता अत्यंत प्रेम से युक्त होता है, वहीं प्रचंड आध्यात्मिक शक्ति के महात्मा उत्पन्न होते हैं।

स्वानुभूति ज्ञान की परम सीमा है, वह स्वानुभूति ग्रंथों से नहीं प्राप्त हो सकती। पृथ्वी का पर्यटन कर चाहे आप सारी भूमि पदाक्रांत कर डालें, हिमालय, काकेशस, आल्पस पर्वत लाँघ जाएँ समुद्र में गोता लगाकर उसकी गहराई में बैठ जाएँ, तिब्बत देश देख लें या गोबी (अफ्रीका) का मरुस्थल छान डालें, स्वानुभाव का यथार्थ धर्म-रहस्य इन बातों से, श्रीगुरु के कृपा-प्रसाद के बिना त्रिकाल में भी ज्ञात नहीं होगा। इसलिए भगवान की कृपा से जब ऐसा भाग्योदय हो कि श्रीगुरुदर्शन दें, तब सर्वान्तःकरण से श्रीगुरु की शरण लो, उन्हें ऐसा समझो जैसे यही परब्रह्म हों, उनके बालक बनकर अनन्यभाव से उनकी सेवा करो, इससे आप धन्य होंगे। ऐसे परम प्रेम और आदर के साथ जो श्रीगुरु के शरणागत हुए, उन्हीं को और केवल उन्हीं को सच्चिदानंद प्रभु ने प्रसन्न होकर अपनी परम भक्ति दी है और अध्यात्म के अलौकिक चमत्कार दिखाये हैं।' ❖

सद्गुरु-लक्षण

–समर्थ स्वामी रामदासजी महाराज

जो लोग करामातें दिखलाते हैं, वे भी गुरु कहलाते हैं, पर वे मोक्ष देनेवाले गुरु नहीं होते। करामातें दिखलानेवाले गुरु नजरबन्दी, टोना-टोटका, झाड़-फूँक, साबरमन्त्र, अनेक प्रकार के ऊटक-नाटक, चमत्कार तथा कौतुक आदि दिखलाते और उन्हीं के संबंध की अनेक असम्भव बातें बतलाते हैं। वे अनेक प्रकार की औषधियों के प्रयोग, कीमिया गरी, लाग और केवल आँखों से देखकर इच्छित वस्तुएँ प्राप्त करने के उपाय आदि बतलाते हैं। एक प्रकार के गुरु वे भी होते हैं, जो साहित्य, संगीत, रागों का, ज्ञान, गीत, नृत्य, तान, सुर आदि अनेक विद्याएँ भी सिखलाते हैं। कुछ गुरु पंचाक्षरी विद्या, अनेक प्रकार की झाड़-फूँक या पेट भरने की विद्याएँ भी सिखलाते हैं। जिस जाति का जो व्यापार होता है, पेट भरने के लिए वह व्यापार सिखलानेवाले भी गुरु कहलाते हैं। पर वे सद्गुरु नहीं होते। अपने माता-पिता भी गुरु ही होते हैं, पर भव-सागर से पार लगानेवाले सद्गुरु दूसरे ही होते हैं। गायत्री मन्त्र सिखलाने वाले गुरु वास्तव में कुलगुरु होते हैं; परन्तु बिना ज्ञान के मनुष्य भवसागर से पार नहीं होता। जो ब्रह्म ज्ञान का उपदेश करे, अज्ञान का अन्धकार नष्ट करे, जीवात्मा का परमात्मा के साथ संयोग करावे, जीवत्व और शिवत्व के कारण ईश्वर और भक्त में होनेवाले भेद दूर करे अर्थात् भक्त को परमेश्वर से मिलावे, वही सद्गुरु है। भव-भय रूपी बाघ उछलकर जीव रूपी बछड़े को ईश्वर-रूपी गौ से छीन लेता है। सद्गुरु वही है, जो ज्ञान-रूपी तलवार से उस बाघ को मारकर जीवरूपी बछड़े को बचाता है और उसे फिर ईश्वर रूपी गौ से मिलाता है। मायाजाल में पड़े हुए प्राणियों और संसार के दुःखों से दुःखी होनेवाले लोगों को मुक्त करनेवाला ही सच्चा गुरु है। वासना रूपी नदी में डूबते हुए प्राणी को बचाकर पार लगानेवाला ही सद्गुरु है। जो ज्ञान देकर गर्भवास के संकट से छुड़ाता है, इच्छा रूपी बन्धन काटता है, जो शब्दों का अन्तर दूर करके सच्ची और सार वस्तु के दर्शन कराता है, वही अनाथों का गुरु और रक्षक है। जो बेचारे एकदेशी जीव को ब्रह्म स्वरूप बनाता है, जो अपने वचन मात्र से संसार के संकट दूर करता है, जो वेदों का गूढ़ तत्त्व बतलाकर वह तत्त्व शिष्य के अन्तःकरण में अच्छी तरह अंकित कर देता है, वही सद्गुरु है। वेदों, शास्त्रों और महानुभावों का अनुभव एक ही है और वही अनुभव सद्गुरु रूप है। ऐसा गुरु सन्देह का नाश करता है, अपने धर्म का भक्तिपूर्वक पालन करता है और वेदों में विरुद्ध कोई काम नहीं करता। पर जो व्यक्ति अपने मन में उठनेवाली प्रत्येक इच्छा पूरी कर लेता है अर्थात् जो अपने मन को वश में नहीं रख सकता, वह गुरु नहीं है, बल्कि ऐसा भिखारी है, जो लोभ के कारण शिष्य के पीछे-पीछे लगा फिरता है। जो शिष्यों को साधन मार्ग में न लगा सके और स्वयं इन्द्रियों का दमन न कर सके, ऐसे कु-गुरु यदि कौड़ी के तीन भी मिले, तो उनका त्याग करना चाहिए। सद्गुरु उसी को समझना चाहिए, जो ज्ञान का बोध कराता हो, अविद्या का समूल नाश करता हो और इन्द्रिय दमन का प्रतिपादन करता हो। जो केवल रुपये पर बिकते हैं और जो दुराशा से दीन बनकर अपने शिष्यों के अधीन बने रहते हैं, वे सच्चे गुरु नहीं हैं। जिसके गले में पापिन कामना पड़ी हो और इसी कारण जो अपने शिष्य को अच्छे लगनेवाले काम ही करता हो, वह गुरु महा अधम, चोर, ठग, पापी और धन के लिए बुरे-बुरे कर्म करनेवाला होता है। जिस

प्रकार दुराचारी वैद्य अपने रोगी के मन के मुताबिक सब काम करके उसका सब कुछ छीन लेता है और अन्त में उसके प्राण भी ले लेता है, उसी प्रकार ऐसा पापी गुरु भी शिष्य की खुशामद करके उसे सांसारिक बंधनों से और भी अधिक जकड़ देता है और परमात्मा से मिलने नहीं देता। ऐसे गुरु से सदा दूर रहना चाहिए।

जो शुद्र ब्रह्मज्ञानी होने पर भी कर्मयोगी हो और सदा उत्तम आचरण करता हो, वही सद्गुरु है और वही परमात्मा के दर्शन करा सकता है। जिसमें केवल ऊपरी आडम्बर हो और जिसे कान में मन्त्र देने भर का ज्ञान हो, ऐसा पामर गुरु परमात्मा के विरुद्ध होता है। जिसमें गुरु-प्रतीति, शास्त्र-प्रतीति और आत्म-प्रतीति हो अर्थात् जिसकी इन तीनों में अनन्य भक्ति हो, वही सच्चा गुरु है और मोक्ष की इच्छा रखनेवाले को आदरपूर्वक ऐसे ही गुरु की शरण में जाना चाहिए। जो अद्वैत का तो अगाध निरूपण करता हो, पर फिर भी जो विषय-वासना में फँसा हुआ हो, उस गुरु से कभी फलसिद्धि नहीं हो सकती। जो निरूपण करते समय मन से आनेवाली उटपटाँग सभी तरह की बातें कह चलता हो और कृतबुद्धि या ज्ञानी न हो, वह सच्चा गुरु नहीं है। अध्यात्म का निरूपण करते समय सामर्थ्य और सिद्धि की बात आ पड़ने पर जिसके मन में दुराशा उत्पन्न हो और अनेक प्रकार के चमत्कारों का प्रसंग आने पर जिसकी बुद्धि चंचल हो जाती हो, मत्सर के कारण जिसके मन में यह भाव उत्पन्न होता हो कि–'पहले बड़े-बड़े विरक्त और भक्त हो गये हैं, जो ईश्वर के समान समर्थ थे, उनके सामने हमारा यह ज्ञान तो व्यर्थ ही है, यदि हममें भी वैसी ही शक्ति होती, तो बहुत अच्छा था।' वह कभी सद्गुरु नहीं है। दुराशा का नाश होने पर ही परमात्मा मिलता है। जिसके मन में दुराशा हो, वह क्षुद्र कामुक और केवल शब्दों का ज्ञाता है, सद्गुरु नहीं है। इसी दुराशा या कामना ने बहुत-से ज्ञानियों को पागल करके नष्ट कर दिया और बहुत-से बेचारे मूर्ख तो कामना करते-करते मर ही गये। ऐसे संत विरले ही होते हैं, जो कामना से बिल्कुल रहित हों और जिनका अक्षय तथा अलौकिक हो। यों तो सभी का आत्मारूपी धन अक्षय है, पर उनकी शरीर संबंधी ममता नहीं छूटती, वे ईश्वर के मार्ग से भ्रष्ट हो जाते हैं। सिद्धि और सामर्थ्य बढ़ जाने पर वे समझते हैं कि हममें बहुत महत्त्व आ गया है और इसी से उनका देह-बुद्धि का अभिमान बहुत बढ़ जाता है। जो लोग अक्षय सुख को छोड़कर सामर्थ्य प्राप्ति की इच्छा रखते हैं, वे मूर्ख हैं। कामना से बढ़कर और कोई दुःख नहीं है। जो कामना ईश्वर को छोड़कर किसी और पक्ष में की जाती है, उस प्राणी को अनेक प्रकार की यातनाएँ होती हैं और अंत में उसका पतन भी होता है। शरीर का अंत होने के साथ ही सामर्थ्य भी चली जाती है और अन्त में उसी कामना के कारण वह भावना से दूर रहता है। इसलिए निष्काम और दृढ़बुद्धि सद्गुरु ही भव-सागर से पार उतार सकता है। सद्गुरु के मुख्य लक्षण यह हैं कि उसमें विमल ज्ञान हो, निश्चयात्मक समाधान और स्वरूप स्थिति हो। इसके सिवा उसमें प्रबल वैराग्य और उदासीन वृत्ति होनी चाहिए और धर्म संबंधी आचरण शुद्ध होना चाहिए। इसके सिवा सद्गुरु ऐसा होना चाहिए जो बराबर अध्यात्म का श्रवण, हरि-कथा का निरूपण और परमार्थ की व्याख्या करता हो। सारासार का विचार करनेवाला ही संसार का उद्धार कर सकता है। साथ ही उसे नवधा भक्ति का आधार होना चाहिए; क्योंकि उससे अच्छी तरह लोक-संग्रह हो सकता है। इसलिए जो नवधा भक्ति का साधन करता हो, वही सच्चा सद्गुरु है। जिसके हृदय में शुद्ध ब्रह्मज्ञान हो और जो बाहर निष्ठापूर्वक भक्ति तथा

भजन करता हो, उसके पास आकर बहुत-से लोग विश्रांति पाते हैं। जिस परमार्थ में उपासना का आधार न हो, उसका फिर और कोई आधार नहीं होता और वह आदमी बिना कर्म के अनाचार करने लगता और भ्रष्ट हो जाता है। इसीलिए ज्ञान, वैराग्य, भजन, स्वधर्म, कर्म, साधन, कथा-निरूपण, श्रवण, मनन, नीति, न्याय, मर्यादा आदि में से यदि एक चीज की भी कमी हो, तो देखने में विलक्षणता या खराबी जान पड़ती है और इसलिए सद्गुरु वही है, जिसमें ये सभी लक्षण वर्तमान हों। ऐसा सद्गुरु बहुतों का पालन करनेवाला होता है और उसे बहुतों की चिन्ता होती है। सद्गुरु के पास अनेक प्रकार के साधन होते हैं और वह बहुत समर्थ होता है। जो बिना कर्म-योग का साधन किये परमार्थ का साधन करता है, वह पीछे से बहुत जल्दी भ्रष्ट हो जाता है। इसलिए महानुभाव पहले से ही सोच-समझकर कार्य करते हैं। जो लोग आचार और उपासना छोड़ देते हैं, वे देखने में भ्रष्ट और अभक्त जान पड़ते हैं। ऐसे लोगों की महत्ता को कोई नहीं पूछता। जहाँ कर्म और उपासना का अभाव हो, वहाँ मानों बहकने की जगह निकल आती है। ऐसे कलंकी समुदाय पर सांसारिक लोग हँसते हैं।

जितने उत्तम गुण हैं, वे सभी सद्गुरु के लक्षण हैं। तो भी उनकी पहचान के लिए यही कुछ बातें बतलाई जाती हैं। कोई यों ही गुरु होता है, कोई मंत्र गुरु होता है, कोई यन्त्र गुरु, कोई तन्त्र गुरु और किसी को यों ही उस्ताद कहते हैं। किसी को राज गुरु भी कहते हैं। कोई कुलगुरु और कोई माना हुआ गुरु होता है। कोई विद्या गुरु, कोई कुविद्या गुरु, कोई असद्गुरु और कोई दण्ड देनेवाला जाति गुरु होता है। एक माता गुरु, एक पिता गुरु, एक राजा गुरु और एक देव गुरु होता है और एक सकल कलाओं का जाननेवाला जगद्गुरु होता है। इस प्रकार ये सत्रह गुरु होते हैं। इनके सिवा और भी कुछ गुरु होते हैं। उनके नाम भी सुन लीजिए। एक स्वप्न-गुरु, एक दीक्षा-गुरु और एक प्रतिभा-गुरु होता है। कुछ लोग स्वयं अपने आपको ही अपना गुरु बतलाते हैं। प्रत्येक जाति के व्यापार का भी एक अलग गुरु होता है। इस प्रकार बहुत-से गुरु होते हैं। भिन्न-भिन्न मतों से इस प्रकार बहुत-से गुरु होते हैं, पर मोक्ष देनेवाला गुरु इन सबसे अलग है। जिसमें अनेक प्रकार की सद्विद्याएँ और गुण हों और साथ ही जिसमें कृपा भी हो, वही सद्गुरु है। लोग सद्गुरु के यही लक्षण समझें। ❖

गुरु

—महात्मा गाँधी

गुरु को प्रसन्न करके ही ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। अगर शुद्ध गुरुभक्ति न हो, तो चरित्र-गठन नहीं हो सकता।

गुरु वही है, जो शिष्य की शंकाओं का समाधान कर उसे सच्चा ज्ञान दे।

गुरु ऐसा होना चाहिए जो शिष्य को सद्ज्ञान दे और उसका आध्यात्मिक कल्याण चाहे और उससे धन ऐंठने की वृत्ति न रखे।

गुरु के बिना किसी भी क्षेत्र का समुचित ज्ञान प्राप्त करना कठिन होता है।

गुरु से ज्ञान तभी मिल सकता है, जब शिष्य में गुरु के प्रति श्रद्धा हो और उसकी सेवा करने की भावना।

गुरु का आदर-मान करनेवाला संसार के सद्गुण प्राप्त करता है।

संसार में गुरु के सम्मान वन्दनीय और कोई नहीं होता।

भारत में प्राचीनकाल से ही गुरु-शिष्य की परम्परा रही है।

सम्पादकीय

गुरु-पूर्णिमा

अनित्य में नित्य, मर्त्य शरीर में अमरता का अनुभव करानेवाला पर्व है—गुरु-पूर्णिमा।

गुरु-पूर्णिमा जो लघु से गुरु की ओर ले जाए, जो मर्त्य शरीर में अपनी अमरता का आत्मप्रकाश कर दे, जीव से ब्रह्म कर दे। जीवत्व बाधित करके ब्रह्मत्व जगा दे, गुरुत्व की ओर ले जाय, वह गुरु-पूर्णिमा है। गुरु-पूर्णिमा उत्सव अर्थात् ज्ञान का आदर-पूजन, परब्रह्म परमात्मा का आदर, ब्रह्मज्ञान का पूजन है।

गुरु-पूर्णिमा को व्यास-पूर्णिमा भी कहते हैं। वशिष्ठजी महाराज के पौत्र पराशर ऋषि के पुत्र वेदव्यासजी जन्म के कुछ समय बाद ही अपनी माँ से कहने लगे—'अब हम जाते हैं तपस्या के लिए।' माँ बोली—'बेटा! पुत्र तो माता-पिता की सेवा के लिए होता है। माता-पिता के अधूरे कार्य को पूर्ण करने के लिए होता है और तुम अभी से जा रहे हो?' व्यासजी ने कहा—'माँ! जब तुम याद करोगी और जरूरी काम होगा, तब मैं तुम्हारे आगे प्रकट हो जाऊँगा।' माँ से आज्ञा लेकर व्यासजी तप के लिए चल दिए। वे बद्रीकाश्रम गए। वहाँ एकांत में समाधि लगाकर रहने लगे।

बद्रीकाश्रम में बेर पर जीवन-यापन करने के कारण उनका एक नाम 'बादरायण' भी पड़ा। पुराणों में प्रसिद्ध है कि यमुना के द्वीप में उनका प्राकट्य हुआ। इसलिए वे 'द्वैपायन' कहलाए और श्याम (कृष्ण) वर्ण के थे, इसलिए 'कृष्णद्वैपायन' कहलाए। वेदसंहिता का उन्होंने विभाजन किया। इसलिए वे 'व्यास' अथवा 'वेदव्यास' के नाम से प्रसिद्ध हुए। भगवान वेदव्यास के नाम से ही आषाढ़-पूर्णिमा का नाम 'व्यास पूर्णिमा' पड़ा है।

यह सबसे बड़ी पूर्णिमा मानी जाती है; क्योंकि परमात्मा के ज्ञान, परमात्मा के ध्यान और परमात्मा की प्राप्ति की तरफ ले जानेवाली है यह पूर्णिमा। इसको 'गुरु-पूर्णिमा' भी कहते हैं। जबतक मनुष्य को सत्य के ज्ञान की प्यास रहेगी, तबतक ऐसे व्यास पुरुषों का, ब्रह्मज्ञानियों का आदर-पूजन होता रहेगा।

गुरु-पूर्णिमा का पावन पर्व आषाढ़ मास की पूर्णिमा के दिन ही क्यों मनाया जाता है?

ज्योतिषशास्त्र के अनुसार हमारे देश में प्रत्येक मास का नामकरण उस नक्षत्र विशेष के नाम पर किया गया है, जिसमें उस मास की पूर्णिमा घटित होती है। जैसे माघ मास की पूर्णिमा मघा नक्षत्र में चन्द्रमा के प्रवेश करने पर होती है। फाल्गुन मास की पूर्णिमा पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में, चैत की चित्रा नक्षत्र में, वैशाख की पूर्णिमा विशाखा नक्षत्र में और ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा ज्येष्ठा नक्षत्र में चन्द्रमा के प्रवेश करने पर होती है।

इसी तरह आषाढ़ मास में जिस दिन चन्द्रमा पूर्ण होता है, वह आषाढ़ नक्षत्र में रहता है, जिसका स्वामी सूर्य है। चूँकि सूर्य आत्मा का प्रतीक है और चन्द्रमा मन का, आषाढ़ मास की यह चन्द्रमा गुरु के मन में सम्पूर्णतः विलीन हो जाने का प्रतीक बन जाता है। मन के अस्तित्व को मिटाये बिना जीव भाव मिटता नहीं। जीव भाव के रहते शिष्य गुरुतत्त्व को प्राप्त नहीं हो सकता। इसी सत्य को उजागर करती है आषाढ़ मास की पूर्णिमा। अतः गुरु-पूर्णिमा आषाढ़ मास की पूर्णिमा के दिन मनाने का यही रहस्य है। गुरु-पूर्णिमा को व्यास-पूर्णिमा भी कहते हैं। क्यों?

एक बार ईरान में विश्व के विद्वानों, धर्माचार्यों की बृहद् सभा हुई थी, जिसमें आर्यावर्त भारत से महर्षि वेदव्यासजी वहाँ गये थे। उस सभा में समुपस्थित विद्वानों से शास्त्रार्थ हुआ था, जिसमें वेदव्यासजी विजयी हुए थे और उन्हें 'जगद्गुरु' की उपाधि प्रदान की गयी थी। आषाढ़ मास की पूर्णिमा के दिन वेदव्यासजी का जन्म हुआ था, अतः इस पूर्णिमा को व्यास-पूर्णिमा कहते हैं।

व्यास का अर्थ है फैला हुआ। ब्रह्म के बारे में कठोपनिषद् कहता है—'अणोरणीयाम् महतोमहीयान्' अर्थात् बड़ा तें बड़ा छोट तें छोटा। ब्रह्म—परमात्मा समास रूप में विन्दु है, ब्रह्म का अणोरणीयाम् रूप है, वृत्त के केन्द्र की तरह सूक्ष्मातिसूक्ष्म। ब्रह्म की सृष्टि है वृत्त जैसी फैली हुई। केन्द्र जैसे वृत्त का जन्म-स्थान है, वैसे ही परमात्मा जगत् का जन्म-स्थान है। 'व्यास, वृत्त के सम्पूर्ण फैलाव को मापनेवाली

वह महत्तम रेखा है, जो केन्द्र को समेटती हुई परिधि को दोनों छोरों पर स्पर्श करती है।' (ज्यामिति से) वैसे ही 'व्यास' कहलाने का अधिकारी वही है, जो अगम अगोचर परमात्मा को तथा उसकी सृष्टि के सम्पूर्ण रहस्यों को जान चुका है, समझ चुका है और समझा सकता है, यह क्षमता गुरु में ही होती है। इसलिए 'गुरु' को व्यास कहते हैं। अतएव गुरु-पूर्णिमा व्यास-पूर्णिमा भी कहलाती है।

वेदव्यासजी ने वेदों के विभाग किये। 'ब्रह्मसूत्र' वेदव्यासजी ने ही बनाया। पाँचवाँ वेद 'महाभारत' वेदव्यासजी ने बनाया। भक्ति-ग्रंथ 'भागवतपुराण' भी वेदव्यासजी की रचना है एवं अन्य १८ पुराणों की रचना भी भगवान वेदव्यासजी ने ही की है। विश्व में जितने भी धर्मग्रंथ हैं, फिर वे चाहे किसी भी धर्म-पंथ के हों, उनमें अगर कोई सात्त्विक और कल्याणकारी बात है, तो सीधे-अनसीधे भगवान वेदव्यासजी के शास्त्रों से ली गयी है। इसीलिए 'व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' कहा गया है। वेदव्यासजी ने पूरी मानव जाति को सच्चे कल्याण का खुला रास्ता बता दिया है। जिनके अन्तःकरण में ऐसे वेदव्यासजी का ज्ञान, उनकी अनुभूति और निष्ठा उभरी, ऐसे पुरुष भागवतकथा में ऊँचे आसन पर बैठते हैं, तो कहा जाता है कि अमुक महाराज व्यासपीठ पर विराजेंगे।

वेदव्यासजी के शास्त्र-श्रवण के बिना भारत तो क्या विश्व में भी कोई आध्यात्मिक उपदेशक नहीं बन सकता, वेदव्यासजी का ऐसा अगाध ज्ञान है। वेदव्सासजी की कृपा सभी साधकों के चित्त में चिरस्थायी रहे। व्यास पूर्णिमा का पर्व वर्ष भर की पूर्णिमा मनाने के पुण्य का फल तो देता ही है, साथ ही नयी दिशा, नया संकेत भी देता है और कृतज्ञता का सद्गुण भी भरता है। जिन महापुरुषों ने कठोर परिश्रम करके हमारे लिए सब कुछ किया, उन महापुरुषों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन का अवसर, ऋषि-ऋण चुकाने का अवसर, ऋषियों की प्रेरणा और आशीर्वाद पाने का अवसर है—व्यास पूर्णिमा। यह पर्व गुरु-पूर्णिमा भी कहलाता है। भगवान श्रीराम भी गुरुद्वार पर जाते थे और माता-पिता तथा गुरुदेव के चरणों में विनयपूर्वक नमन करते थे—

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा।
मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।

गुरुजनों, श्रेष्ठजनों एवं अपने से बड़ों के प्रति अगाध श्रद्धा का यह पर्व भारतीय सनातन संस्कृति का विशिष्ट पर्व है।

इस प्रकार कृतज्ञता व्यक्त करने का, तप, व्रत, साधना में आगे बढ़ने का भी यह त्योहार है। संयम, सहजता, शांति, माधुर्य देनेवाली और विषय-विकारों से बचकर निर्विषय, निर्विकारी नारायण के सुख को प्रकटानेवाली पूर्णिमा है—गुरु-पूर्णिमा। ईश्वर-प्राप्ति की सहज, साध्य, साफ-सुथरी दिशा बतानेवाला त्योहार है गुरु-पूर्णिमा। यह आस्था, श्रद्धा, समर्पण, सत्य प्राप्ति का पर्व है।

श्रीरामकृष्ण परमहंस के प्रमुख शिष्यों में से एक स्वामी ब्रह्मानन्द (राखालराज, जिन्हें रामकृष्ण परमहंस अपना 'मानस पुत्र' कहा करते थे) से एक बार किसी ने पूछा—'महाराज! दीक्षा लेने की आवश्यकता क्या है? स्वयं अपने बल पर साधना करने से ही तो हो जाएगा।' ब्रह्मानन्दजी ने कहा—'दीक्षा लिए बिना एकाग्रता नहीं होती। आज शायद तुम्हें काली का रूप अच्छा लगे, कल हरि का रूप अच्छा लगे और परसों निराकार अच्छा लगने लगे, परिणामतः किसी में भी एकाग्रता नहीं होगी। मन स्थिर न हो, तो भगवान-लाभ तो दूर की बात है, मामूली सांसारिक कर्म में भी गड़बड़ी होने लगती है। भगवान-लाभ करने के लिए गुरु की नितांत आवश्यकता है। गुरु के वचनों में विश्वास करके यदि निष्ठासहित साधन-भजन न करो, तो किसी भी हालत में कुछ नहीं होगा। धर्म का रास्ता अति दुर्गम है। सिद्ध गुरु का आश्रय मिले बिना कोई कितना भी बुद्धिमान क्यों न हो, कितना भी प्रयत्न क्यों न करे, उसे ठोकर खाकर गिरना पड़ेगा ही। चोरी करने के लिए भी एक गुरु की आवश्यकता होती है, तब फिर इतनी श्रेष्ठ ब्रह्मविद्या का लाभ करने के लिए गुरु की आवश्यकता भला क्यों नहीं होगी?' गो० तुलसीदासजी महाराज ने कहा है—

गुर बिनु भव निधि तरइ न कोई। जौं बिरंचि संकर सम होई।।

'गुरु के बिना कोई भवसागर नहीं तर सकता, चाहे वह ब्रह्माजी और शंकरजी के समान ही क्यों न हों।' इस पुनीत अवसर पर सर्वकाल सदा वर्तमान संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज के परम पावन चरणों में कोटिशः नमन! ❖

सप्ताह-ध्यान-साधना-शिविर एवं सत्संग का आयोजन

स्थान : महर्षि मेँहीँ सत्संग आश्रम, छातापुर, जिला-सुपौल

दिनांक : ०९ अगस्त से १५ अगस्त, २०११ ई० तक

फिरै चहुँ दिशि जगत में, अरु वक्तृता देता फिरै। ध्यान बिनु नहिं शान्ति आवै, लोगहू कितनहु घिरै।।

आज चतुर्दिक मानव-जीवन में मानसिक विकृति आ गई है, जिससे सामान्य जीवन अशान्त-सा दीखता है। ध्यान-साधना ही मानवीय जीवन में सुख-शांति ला सकती है। इसी उद्देश्य से महर्षि मेँहीँ सत्संग आश्रम, छातापुर में दिनांक ०९.०८.२०११ ई० से १५.०८.२०११ ई० तक सप्ताह-ध्यानाभ्यास एवं सत्संग का आयोजन किया जा रहा है। ध्यानाभ्यास में भाग लेने के इच्छुक साधक दिनांक ०८.०८.२०११ ई० की संध्या तक सत्संग-स्थल पर आवश्यक व्यावहारिक सामानों के साथ पहुँच जाएँ। इस सुअवसर पर महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर से स्वामी कमलानंद बाबा अन्य महात्माओं एवं विद्वानों के साथ पधार रहे हैं। अतएव सभी धर्मावलम्बियों से निवेदन है कि अधिकाधिक संख्या में पधारकर संत-महात्माओं के दर्शन एवं प्रवचन से लाभ उठावें।

संपर्क सूत्र : श्रीमुकेश कुमार साह, मो० : ९००६२३१२८४
श्रीविन्देश्वरी भगत, मो० : ९९३१६५५१४५

निवेदक
ब्रह्मनारायण लाल दास, जीतन मालाकार, विन्देश्वरी भगत, मुकेश कुमार साह एवं स्वागत समिति, छातापुर

पक्ष-ध्यान-साधना-शिविर का आयोजन

स्थान : महर्षि मेँहीँ आश्रम, चुटिया, राँची — **साधक संख्या : ५१**

दिनांक : १३ सितम्बर से २७ सितम्बर, २०११ ई० तक — **व्यवस्था शुल्क : २०१**

यदि शैल समं पापं विस्तीर्ण बहुयोजनम् । भियते ध्यानयोगेन नान्यो भेदः कदाचन ।।

संतमत के वर्तमान आचार्य पूज्यपाद पूज्यपाद महर्षि हरिनन्दन परमहंसजी महाराज के निर्देशानुसार महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट (भागलपुर) के व्यवस्थापक स्वामी निर्मलानन्द एवं स्वामी संजीवानन्द (महर्षि मेँहीँ आश्रम, चुटिया) के सान्निध्य में यह आयोजन होने जा रहा है। जो साधक इस शिविर में भाग लेने के इच्छुक हैं, वे अपना शुल्क-सहित आवेदन-पत्र दिनांक ०५ सितम्बर, २०११ ई० तक भेज सकते हैं। साधक अपने दैनिक व्यवहार के सामान के साथ १२ सितम्बर के शाम तक साधना-शिविर में पहुँच जाएँ।

नोट : फोन से सम्पर्क कर अपना स्थान सुरक्षित करवा सकते हैं।

सम्पर्क सूत्र : स्वामी संजीवानन्द, मो० : ९४३१३६५७८८, श्रीसंजय पोद्दार (व्यवस्थापक), मो० : ९४३१५८७४९८
श्रीगजानन तुलस्यान, श्रीफतेह चन्द्र अग्रवाल (संरक्षक), श्रीयोगन्द्र पोद्दार (अध्यक्ष), श्रीचन्दु काबरा (मंत्री)

निवेदक :
राँची जिला संतमत-सत्संग समिति एवं क्षेत्रीय सत्संगीगण

कटिहार जिला संतमत-सत्संग का ३४वाँ वार्षिक विशेषाधिवेशन

स्थान : मध्य विद्यालय भमरैली के प्रांगण में, पंचायत-भमरैली, प्रखंड-डंडखोरा (कटिहार)

दिनांक : २२ एवं २३ अक्टूबर, २०११ ई० (शनिवार एवं रविवार)

इस पावन अवसर पर महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर के वरिष्ठ महात्मागण एवं अन्य विद्वानों के प्रवचन होंगे। अतएव सभी धर्मावलम्बियों से निवेदन है कि अधिकाधिक संख्या में पधारकर संत-महात्माओं के दर्शन एवं प्रवचन से लाभ उठावें।

द्रष्टव्य : सभी दिशाओं से आनेवाले सत्संग प्रेमीगण कटिहार जं० उतरें, वहाँ से पुनः दूसरी ट्रेन से डंडखोरा रेलवे स्टेशन आएँ। डंडखोरा से उत्तर ३ कि०मी० की दूरी पर भमरैली सत्संग स्थल है, टेम्पू या रिक्शा द्वारा पहुँचें। कटिहार रेलवे स्टेशन के निकट कल्याण चौक या भगवान चौक से बस या जीप द्वारा भमरैली सत्संग स्थल पहुँचें। पूर्णियाँ से बस या जीप द्वारा बेलोरी-सोनाली होते हुए भमरैली सत्संग-स्थल पहुँचें। बारसोई रेलवे स्टेशन से सोनाली आएँ, वहाँ से टेम्पू द्वारा भमरैली पहुँचें।

संपर्क सूत्र : श्रीविनोद विश्वास (मुखियाजी), स्वागताध्यक्ष, मो० : ९४३१८६६८७२
डॉ० मुसाहेब लाल मंडल (सरपंच), श्रीपंचानन्द पोद्दार (स्वागत कोषाध्यक्ष)
श्रीयोगेन्द्र विश्वास (स्वागत उपकोषाध्यक्ष), मो० : ८५२१०९४६४३
श्रीभीमानन्द स्वर्णकार (स्वागत मंत्री), मो० : ९४३०९२७६३२

निवेदक : कटिहार जिला संतमत-सत्संग समिति एवं स्वागत समिति, भमरैली तथा समस्त ग्रामीण जनता

पक्ष-ध्यान-साधना-शिविर का आयोजन

स्थान : महर्षि मेँहीँ आश्रम, मलियादा, मुरहू, खूँटी (झारखण्ड)

साधक संख्या : १०१, **दिनांक :** ०५ नवम्बर से १९ नवम्बर, २०११ ई० तक, **व्यवस्था शुल्क :** १५१ रुपये मात्र

यदि शैल समं पापं विस्तीर्ण बहुयोजनम् । भियते ध्यानयोगेन नान्यो भेदः कदाचन ।।

संतमत के वर्त्तमान आचार्य पूज्यपाद महर्षि हरिनन्दन परमहंसजी महाराज के निर्देशानुसार महर्षि मेँहीँ आश्रम, मलियादा, मुरहू में पक्ष-ध्यान-साधना-शिविर का आयोजन किया गया है। इस पावन अवसर पर महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट (भागलपुर) के व्यवस्थापक स्वामी निर्मलानन्द एवं स्वामी संजीवानंद (महर्षि मेँहीँ आश्रम, चुटिया) तथा लक्ष्मण बाबा भी उपस्थित रहेंगे। अतः शिविर में भाग लेनेवाले साधकों से आग्रह है कि वे अपनी सहभागिता के संबंध में ०१ नवम्बर, २०११ ई० तक निम्न पते पर सूचित करें। पक्ष-ध्यान-साधना-शिविर का समापन समारोह २०.११.२०११ ई० को होगा।

पत्राचार : श्रीलक्ष्मण बाबा (व्यवस्थापक), महर्षि मेँहीँ आश्रम, मलियादा, मुरहू, खूँटी (९४३१३४२२३८)

संरक्षक : श्रीसुखराम मुण्डा **अध्यक्ष :** श्रीधर्मेन्द्रनाथ तिवारी **निवेदक :** खूँटी जिला संतमत-सत्संग-समिति

पंजीयन सं० R.N. 30868/66 **शान्ति-सन्देश** Postal R.N./BGP.-97/2009
रजिस्ट्रार ऑफ न्यूज पेपर (भारत सरकार) जुलाई, २०११ ई०

जयन्ती-समाचार

संत सद्गुरु महर्षि मेँहीँ परमहंसजी महाराज की १२७वीं पावन जयंती दिनांक १६.०५.२०११ ई० को महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट; महर्षि मेँहीँ जन्मभूमि खोखसी श्याम मझुवा; महर्षि मेँहीँ आश्रम, सिकलीगढ़ धरहरा; महर्षि मेँहीँ आश्रम, मनिहारी के अतिरिक्त निम्नलिखित स्थानों में भी धूमधाम के साथ मनायी गयी–

उत्तरांचल–महर्षि मेँहीँ ध्यानयोग आश्रम, लक्ष्मणझूला, ऋषिकेश; महर्षि मेँहीँ ध्यानपीठ, हरिद्वार; महर्षि मेँहीँ ज्ञान-वाटिका, देहरादून; **उत्तर प्रदेश**–बेतिया हाता, गोरखपुर, लखनऊ, झाँसी, मथुरा, आगरा, अलीगढ़, कानपुर। **हरियाणा**–करणाल, राजपुर खुर्द, दिल्ली। **नेपाल**–सूँघा कुटी, विराट नगर, हरैचा, चन्दनखाड़ी, रंगेली, गोविन्दपुर, डाइनियाँ, दमकनगर। **पश्चिम बंगाल**–रामपुरहाट, वीरभूम, काँकीनाड़ा, कलकत्ता। **पूर्णियाँ**–बड़हरा, मीरगंज, चाँदी खगाहा, भवानीपुर राजधाम, बड़हरा कोठी, जलालगढ़, बुढ़िया, रघुवंशनगर, मल्लडीहा, गैदूहा, बिरौली बाजार, सियारखम, रहुआ, कसबा, मधुबनी, पुरैनियाँ, झालीघाट, बनमनखी, मौजमपट्टी। **अररिया**–खरहट, आमबाड़ी, कनखुदिया, डोरिया, दीपनगर, जगता, रानीगंज, ग्यासपुर, अररिया (कालीबाजार), महेशखूँट खाब्दह डुमरिया, बैरख, पोखरिया, अरमा जीवछपुर, बेंगा करहाबाड़ी, टेढ़ीमुसहरी, पलासी, गड़हा, भोरहर, भगवानपुर, कामत, लकुनवाँ, रहरिया, बौंसी यादवटोला, नयाटोला, गढ़गामा, सैदाबाद, नरपतगंज, कमलदाहा, पथराहा, डुमरिया, दक्षिणटोला, बेलसारा, खैराचन्दा, कुआड़ी, मेरीगंज, ईगरपुर, भटगामा, अमौर। **मधेपुरा**–महर्षि मेँहीँ नगर कठौतिया, बभनगामा, लक्ष्मीनियाँ परसाही, लालुटोकन पिपराही, अरजपुर, रहीचाँय टोला तरसुआ, परमानन्दपुर, सिंहेश्वर, जदुवापट्टी, शिवनगर, वृन्दावन, सत्संग मंदिर रामपुर, गम्हरिया, मधेपुरा, करुबैली। **सहरसा**–महर्षि मेँहीँ योगाश्रम सिमराहा, खरका तेलवा, बैजनाथपुर, ब्राह्मणटोली, महर्षि मेँहीँ टोल भद्दी, काशनगर, असैय, अमृत नगर, कन्दाहा, महर्षि मेँहीँ आश्रम, गाँधी पथ सहरसा, महर्षि मेँहीँ आश्रम, सिम्पूजी कॉलोनी सहरसा, पतरघट, बरियाही, बनमा इटहरी, सिमरीबख्तियारपुर, पहाड़पुर, सरौनी। **कटिहार**–गामीटोला, मिरचाईबाड़ी, महर्षि मेँहीँ नगर बरमसिया, कटिहार, काँटाकोश, गोआगाछी, अमदाबाद, नवाबगंज, महुअर, कुम्हड़ी, बकिया डुमर, फुलबड़िया, मुशापुर, कोढ़ा, चंदवा, विषहरिया, टिकैली, रोशना, तेगछिया, कदवा, देवगाँव, जैनियाँ, घुसकी भंगाहा। **खगड़िया**–थेभाई, सहरबन्ना, कैथी, पनसलवा, बेलदौर, पीरनगरा, मानसी, महेशखूँट, गोगरी जमालपुर, सुमेरीटोला, लक्ष्मीपुर, कोलवारा, सलपुर कुल्हड़िया, मथुरापुर; पौरा, बैसा, मड़ैया, कर्णा, शेदपुर, फसराहा, डुमरियाखुर्द, अलखपुर दीनाचकला, संतनगर, खगड़िया, रामगंज, भरतखंड, बन्देहरा, महद्दीपुर। **भागलपुर**–अमरी बिसनपुर, बिहपुर, महदत्तपुर, प्रतापनगर, सलायगढ़, अठनियाँ, गोटखरीक, गणेशपुर, रंगरा, कमरगामा, फुलबड़िया, मनोहरपुर, झंडापुर, आशाटोल, नवगछिया, सुकटिया बाजार, सिमरिया टोला, पकरा, नवटोलिया, तिनटेंगा करारी, बालूटोला तिनटेंगा, साहूपाड़ा दिग्घी, मुरलीपहाड़ी ईशीपुर, सकरामा, ढोलबज्जा, सुलतानगंज, अकबरनगर, परबत्ती, सैनो, मोहद्दीनगर, मंडल कारा भागलपुर। **गोड्डा**–सत्संग आश्रम डोय, कमरगामा, करमाटाँड़, घाट कुसमनी, नारायणी, भदरिया, लत्ता, पोड़ैयाहाट, बेलटिकरी, पिंडराहाट, पन्दाहा, कोरका, चिलरा रामपुर, मिरजाचक, दुधियापहाड़ी, पथरगामा, पिरोजपुर, महर्षि मेँहीँ आवासीय विद्यालय गोड्डा, मोहनपुर, सरौनी बाजार। **बाँका**–बभनगामा, कटोरिया, इनाराबरण, पथरा, कुमरडीह, रायकोला, चान्दन, नंदलालपट्टी। **दुमका**–बघनोचा, रसिकपुर, रामगढ़, फतेहपुर, दुमका। **मुंगेर**–मुंगरोरा, बिन्दवारा नवटोलिया, नयागाँव, पाटम, केशवपुर, जमालपुर, शास्त्रीनगर, मुंगेर। **सुपौल**–संतमत-सत्संग आश्रम मचहा, रतनसार, निर्मली, वकैली, प्रतापगंज, उधमपुर, करिहो केंजारा, रतनपुर, सिमराही, महम्मदगंज, प्रतापनगर, त्रिवेणीगंज, परसाही, लक्ष्मीनियाँ, छातापुर, सिमराही, सुखानगर, गुड़िया। **देवघर**–झालर, विलियम्स टाउन देवघर। **साहेबगंज**–बड़तल्ला, हरचन्दपुर, सोनाजोरी, आम्रकुंज कुसमा, बड़हरवा, दरलाघाट। **किशनगंज**–भौड़ाटोला हरिभाषा, कोचाधामन, मोधोतेतलिया, तुलसिया, टेढ़ागाछ। **अन्य स्थानों से**–चास (बोकारो), राजेन्द्र पटना, बलाचौर (पंजाब), पुलडोडा (प्रेमनगर), जम्मू-कश्मीर, श्रीरामपुर, काउली (असम), लामडिंग (असम), महर्षि मेँहीँ सत्संग मंदिर, चुटिया, मुरहू, मलियादा, राँची, सिंहभूम, बन्दगाँव, चतरा, हजारीबाग, पतरातू, रामगढ़ केदला, धनबाद, भूली, गोविन्दपुर, चुलिहारा, गया, रानीगंज, मोरवांड़ा, समस्तीपुर, नवहट्टा, बेगुसराय, फुलबड़िया, बरौनी, नवादा, चकाय, अमरपुर, एकचारी, कहलगाँव, सिसई, पुरुषोत्तमपुर, बिहरा, रामपुर-मोहनपुर, सौरबाजार, रंसिया, महर्षि मेँहीँ सत्संग मंदिर भटगामा, चकला (अररिया), महर्षि मेँहीँ नगर कठौतिया, सत्संग मंदिर रजनी गोठ (मधेपुरा), गोविन्दपुर, बेलही, सुपौल, मारवाड़ बीठड़ी, फलौदी (राजस्थान), गुजरात, मुम्बई, जम्मू-तवी।

प्रो० डॉ० गुरु प्रसाद, एम०ए० (द्वय), एम०एड०, पी-एच०डी०, महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर-३ (बिहार) द्वारा संपादित एवं प्रकाशित तथा शांति-संदेश प्रेस, महर्षि मेँहीँ आश्रम, कुप्पाघाट, भागलपुर-३ (बिहार) में मुद्रित।